

COPYRIGHT
Third Edition, 1937

*All copies legitimately sold bear the impression
of the University Seal*

*Note — All the portions of the Hindi VI
specified to be omitted from the Re-
Course in the University Calendar have
been deleted from the present edition*

नोटः— हिन्दी विलास के जो अंश ग्लन परीक्षा क क
नहीं थे, व सब के साथ इस संस्करण में निकाल
गये हैं। अतः यह सारी पुस्तक परीक्षा क क
समझनी चाहिये।

PREFACE

The Rating examination has become, to all intents and purposes, an examination for Hindu kids of tender age. The Board felt the necessity of a practical selection that would supply the juvenile readers with what is best in Hindu literature, avoiding at the same time the tedious element.

The present work is designed to meet this demand. It includes in it only those pieces which possess sterling worth, and are not beyond the ability of the young readers.

The introduction is a brief summary of the Hindu literature. It touches the main currents of each period and brings out the characteristics of the leading poets. Notes are fairly exhaustive.

I should take this opportunity of tendering my thanks to the members of the Board who entrusted me with this work, and to the poets, past as well as present, from whom I have indulgently drawn

D. A. V. COLLEGE, |

LAHORE. |

SURYA KANTA.

Dated 5th July, 1933

भूमिका

१

१—एक बहुत बड़े विराट भूभाग में एक हजार वर्षों से प्रचलित हिन्दू भाषा का साहित्य, इस देश के सामंजस्य में निरन्तर अत्यन्त लौकिक हो जाने का श्रेष्ठ साधन है। भारत की सम्पूर्ण तथा समस्त विपन्नता को दूर करने के कारण हिन्दू साहित्य का लौकिक बान्धन है।

२—हीन के सामान्य व्यक्तित्व को साहित्य कहते हैं। देश लौकिक बान्धन में होने वाले परिवर्तनों के सम्बन्ध में साहित्य में भी परिवर्तन होते रहते हैं। इस दृष्टि से हम हिन्दू साहित्य को बार दुनो में बाँट सकते हैं—

१. वैराग्य काल से १००० से १५०० तक।

(२) वर्तमान काल से १५०० से १७०० तक।

(२ क)

(३) रीति काल स० १७०० से १८५० तक ।

(४) गद्य काल स० १८५० से अद्य तक ।

२

धीरगाथा काल

३—यह युग राजनीतिक उत्थान और पतन का युग था । भारत वदुतर भाग पर विदेशियों का आधिपत्य स्थापित हो चुका था । लाहौर, देहली, मुलतान तथा अजमेर आदि में मुसलमानों विजय है तबन्ती फूटने लगी थी । राजाओं को घरेलू कर्ष अवकाश न मिलता था । वे समयवशों में एक दूसरे के खिलाफ लेना जानने थे, किन्तु विदेशियों के साथ नहीं अन्यत्र शत्रुताक्रमानुसार आन पर मर मिटने वाले थे, उनसे यह युग उनके अन्तर्विभाग राजनीतिक अदूरदर्शिता तथा पारम्परिक कानून के कारण तथा के कारण था ।

४—जिस समय उत्तर भारत में पन्ना अशान्ति तथा अन्ध का आटीप उठा था, उसी समय बड़ा अवधराभा में उत्पन्न होकर उत्तर भारत में अन्ध हो वि में खेल रही भीषण हलचल तथा विद्रोह अशांति का युग में साहित्य सर्वाङ्गाना विकास असम्भव होना था । ऐसे काल में ही धीरगाथाविना कविता का हा का गज हुआ करती है । कि के अदि युग में भी बारम्बार का कविता ही मिलती है ।

५—धीरगाथा काल में हम जान का जाना स्वाभाविक था कि

और पदमावती के प्रेम रूपरुप द्वारा जोय और परमात्मा के लोकोत्तरप्रेम की अभिव्यंजना की है। इसके व्यक्त जगन् की अव्यक्त चित्ति का प्रतिबिम्ब अथवा विकास नमक पर पाएँगे व्यक्त के अनगणित नाम रूप भेदों का ऐक्य में समन्वय किया है और पीछे से प्रतिबिम्ब मात्र का बिम्ब के साथ तादात्म्य स्थापित किया है। संसार में एक मात्र प्रेम ही ऐसी शक्ति है जो भिन्न भिन्न व्यक्तियों में एकता उत्पन्न कर सकती है। जायसी आदि ने इसी प्रेम के द्वारा भेदों का अभेद में समन्वय किया है।

१५—(ई) धरतुवर्णन। प्रेमनागी कविता का प्रधान लक्ष्य वस्तु अथवा घटनाओं का वर्णन करना नहीं, प्रत्युत उन वस्तुओं तथा घटनाओं के पीछे विराजने वाले तादात्म्य रूप चरम सत्य का अभिव्यंजन करना है। फलतः ये वस्तु वर्णन में देव की और घटना वर्णन में भूपण की समता नहीं कर पाये।

१६—(व) भावसंकेतन। कविता का एक ध्येय रति, शाक, उत्साह आदि अभिलिखित भावों का समुत्थापन करना है। जायसी ने पदमावत में रति तथा शाक आदि भावपूर्ण व्याख्यान किया है। सूफ़ी कवियों की दृष्टि लोकात्तर अनुराग में रंगी होने के कारण अत्यन्त व्यापक तथा सामिन्त है।

१७—(ङ) अलंकार। कविता का प्रमुख ध्येय भावचित्रण है न कि भाषा भूषा अथवा अलंकार प्रदर्शन। जायसी आदि ने भाव की प्रधानता देते हुए अलंकारों को यहीं तक अपनाया।

श्री विद्यामय

२१—कवीर आदि संतों ने हिन्दू और मुसलमानों की मर
बुद्धि को दूर करके, सरल, सदाचारपूर्ण जीवन व्यतीत करने
का करारा दिया था। जायसी आदि लौकिक प्रेम को स्वर्गाय
बनाने के प्रयासी हुए थे। गूर आदि ने मरुत भावों में भावित
वृत्त काव्य की रचना कर अमंगल हृदयों को दूर बनाया था
और तुलसी ने भारत की संस्कृति का बड़े ही दयाकर, मरुत
और दार भाव में अहित कर हिन्दू जाति का प्रतिनिधित्व
प्राप्त किया था। इन सत्ता की कृति में कविता का अन्तर्गत
आर वदिरङ्ग जना समान रूप में विकसित है। इन कवियों
ने भाव का भाव का रूप बनाकर रचना रचाया किया
है। अतएव स मरुत का काम लिय है मरुत का नहीं।

[illegible]

निश्चय मनुष्य दण्डिका में वे हमसे बिन्दे गए हैं ।

२१—दिल्ली के राज्य में प्रेम था; बिन्दु पर प्रेम भीड़ था,
ऐक्य था । हमारे कविता में "प्रेम को पार" समझा है
और हमारे कविता हमने वैविध्य भा भागने समझा है बिन्दु
यन्त्र में पर प्रेम, मान्य निश्चय सुख के उस ऊपर समझा है,
तो समझ को पवित्र तथा प्रतिष्ठित समझा है, वही दूर है ।
पर तो मनुष्य के हृदय का, तो प्रेम का एक मात्र समझा है,
और जहाँ समझ प्रेम के ही समझ न रह को भी है समझ "श
राज है, प्रतिष्ठित समझ है, विचारना है

२२—मनुष्य का समझ समझ समझ को में समझ है ।
हम समझों के समझ का समझ, हम पर समझों को
समझ विचार का समझ नहीं वही समझ समझ
समझ का समझ है और समझ का समझ है । मनुष्य को
समझ समझ समझ का समझ है समझ कविता है । समझ
के समझ में है मनुष्य का समझ को समझ को है, वही
हमने समझ समझ का समझ है समझ समझ-
समझ को समझ का समझ न समझ है । समझ कविता
में समझ समझ को समझ नहीं समझ समझ । समझ
समझ में भीड़ समझ को समझ समझ के समझ
समझ समझ समझ । इस समझ का समझ में वही समझ
समझ है

२३—समझों कविता में समझ, समझ, समझ,

३५—राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र आदि के उद्योग से सान्निधिक, सान्निदाधिक, राजनीतिक तथा साहित्यिक क्षेत्रों में नये जीवन का स्थान हुआ और जनता में नव्य शिक्षा तथा दीक्षा की ओर अप्रसर होने के भाव उत्पन्न हुए। प्रतिभारानी बंगीय कवियों ने संस्कृत तथा अंग्रेजी साहित्य का आश्रय ले अपनी भाषा में सन्निभरामिक साहित्य उत्पन्न किया था, जिसका पड़ोस में होने के कारण हिन्दी साहित्य पर सरसूर प्रभाव पड़ा। साहित्यक्षेत्र में नव्य प्रकाश की किरणें फैल गईं। नवीन युग की भाव-भंगी की देश कविता की स्थिति बड़ी खराब थी। उसमें वारण्य की तरंगें दौड़ गईं। उसने अभिलेखिका निरूपण आदि की पुरान भूषा की त्याग देना सेवा तथा बड़े सेवा आदि के भावों से अपना कलेवर सजाया।

३६—जब तक कविता प्रेम भाषा में होती थी और उसमें काव्य तथा सुवैया आदि छन्दों का प्रयोग होता था, हिन्दी भाषा में नवीन कालों की अपना शिक्षा था किन्तु यह में अपनी काम-तला और सरसदा के कारण, प्रवभाना ही उपलब्ध हो रही थी। नवीन युग के साहित्य में नवीनता आई। प्रेम-भाव का आसन नवीन कालों ने ले लिया। जन्मों में अनेक-रूपदा करने लगीं। नवीन छन्दों का आविष्कार हुआ। यह सब कुछ हुआ किन्तु इन सब की अपेक्षा कहीं अधिक महत्व-शाली पाठ हुई "व्याकरण की प्रतिष्ठा" भारतेन्दु के जन्म

[illegible]

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।
 श्रीकृष्णार्जुनसंवादे ।
 अथ कुरुक्षेत्रे युद्धम् ।
 ॥ १ ॥

प्रसाद पांडेय, टाट्टर गोपालशरणमिह श्रीर सीमती मुमता-
कुमारी चोपान आदि के नाम उल्लेख योग्य हैं ।

४४—छायावाद—हिन्दी की काव्याधारा का सामान्य परिचय
उपर दिया गया है । अब कुछ काल से हिन्दी में रहस्यवाद
अथवा छायावाद की कविता के दर्शन हुए हैं । इन पिपय में
हिन्दी साहित्य की पुत रघुनन्दनाथ जी का श्रेष्ठ है ।

४५—यादू जयशंकर प्रसाद पहले ही से रहस्यवाद की कविता
कर रहे हैं । उनकी कविता में मृदा कवियों का दृढ़ पाया जाता
है और अमेझी कविता की पालिश मिल रही है । इनकी
कविता में संस्कृत के शब्द अधिक रहते हैं । अद्वैतवाड का
आधार लेकर रहस्य का व्याख्यान करने वाले हिन्दी कवियों
में पं० नूर्यरान्त त्रिपाठी श्रेष्ठ हैं । उन्होने तथा पंडित मुमित्रा-
नन्दन पन्त ने पश्चिम से बहुत कुछ सीखा है और रघुनन्दनाथ
तथा वैष्णव कवियों से सहायता ली है । "सामूहिक राष्ट्र से
देखने पर छायावाद की कवियों में श्री मुमित्रानन्दन पन्त की
रचनाएं सर्व श्रेष्ठ ठहरती हैं ।" उनकी उड़ान उंची है, उनकी
वेदना सूक्ष्म तथा मार्मिक है, उनके शब्दों में आत्मानुभूति की
मलक है और उनकी रचना में चरम सौन्दर्य का भग्न उन्मेष
है । पं० मोहन लाल महतो की रचना में भी रहस्य का बोधा
चमत्कार है ।

४६—अब तक हमने वर्तमान हिन्दी कवियों पर मृदम रूप से

कहेंगे कि इन दिनों या हिन्दी समुद्र किन्हीं ऐसे आन्दोलन से
 आलोकित भी नहीं हुआ जिसका समुद्र्य मांस की राज्यमांति,
 इंग्लैण्ड के रोवसपेरियन युग अथवा रूस के राज्य विषय में
 दिया जा सके। समाज की इन उदण्ड मांतिओं में समाज के
 युगयुगागत भावों तथा सिलान्तों का विद्यात्मक संघर्ष होता है।
 आदर्शरत्ना के समय अरस्मान् उदित होने वालों प्रतिभाओं
 में इस संघर्ष का व्यापक प्रकाशन होता है। भारत में यग-
 विन्देद तथा छिलाकत जैसे आन्दोलन हुए। कन्नड ददा कवि
 श्रेष्ठ रवीन्द्र तथा अविषय गान्धी के दशन हुए। अर्भी हिन्दी
 कवियों को समाज ने कोई ऐसे नये विषय अथवा वेदनानया
 भावनाएं नहीं दीं जिनके आधार पर वे किसी प्रकार का
 विश्वजनक कविता का निर्माण कर सकते। जिस अकर्मण्य
 संतोष के साथ हम अपने पुराने धार्मिक विन्यासों और सकंण
 सामाजिक संस्कारों में अपना जीवन घमांटने आए हैं उन्हीं
 शिथिलता के साथ हमारे जीवन व्यवसाय कवियों ने प्राचान
 काव्यकला के आधार पर निजीव कविताएं की हैं। जिस
 हिवक के साथ हम ने नवीन सत्कृति तथा पराति को अरनाया
 है उन्हीं निम्नक के साथ उन्हीं ने नये विषयों तथा शैलियों का
 आंचल पकड़ा है। अर्वात का अन्धप्रेम हम से अब तक नहीं
 छुड़ा है। वर्तमान का समर्थ आशय हम ने अब तक नहीं
 समझा है। भविष्य का सर्वाङ्गीण चित्र हमारे समुद्र्य अब
 तक नहीं आया है। इन कठिनाइयों के निबिड काल में से

शुद्धि पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९.	८	अदनि परवनि	अवनिप रंवनि
१०.	११.	दान्हा	दीन्हा
१०.	१२.	अवतंहु	अवतरंहु
१७.	१३.	मन	सन
२२.	१.	कु.नि	वृन्नि
२२.	२०.	हेना	देना
२३.	१	तुम	तनु
२३.	१४.	करतर हेउ	करत रहेउ
५४.	३.	पोत	नात
५७	८.	परया	वारया
६७.	२०.	देरया	दरया
८२.	३.	अपित	अपित
८३.	१०.	भग	भंग
८७.	६.	तन	धन
८७.	१२.	टेल	पेलि

विषय-सूची

प्रथम तरङ्ग

विषय

पृष्ठ

१. तुलसीदास ✓			
परशुराम-लक्ष्मण-सम्बाद ✓	३
मन्यराज-कैकेयी-सम्बाद X	१३
दशरथ-कैकेयी-सम्बाद ✓	२०
राम के विनीत वचन	२७
राम-सीता-सम्बाद ✓	२९
भरतागमन के समय लक्ष्मण का क्रोध और धीराम का उन्हें समझाना	३४
२. कबीर			
वैराग्य में अनुराग	४१
प्रोत्साहन	४३
सेवक और दास का अङ्ग	४४
सूरमा का अङ्ग	४६
चेतावनी का अङ्ग	४९
शब्द का अङ्ग	५३

तृतीय तरङ्ग

विषय

पृष्ठ

८. हरिश्चन्द्र ✓

गङ्गावर्णन —	१२१
कालिन्दी सुपना ✓	१२३
देश भक्त के आत्मा	१२६
योगत भाषना :	१२८
निराशा ✓	१२९
सृष्टि-सुमन ✓	१३२
लक्ष्मी ✓	१३४
गुरुवश्यता	१३५
शारदी सुपना	१३६
सेवाधर्म	१३८
पुरातन वदान	१३९
वृद्धोद्यत	१४०

९. बदरीनारायण चौधरी

विजयी भारत	१४१
------------	-----	-----	-----

विषय

पृ

१. प्रतापनारायण मिश्र

जन्म के ठगिया	१४४
अपने करम आपने संगी	१४६

२. नाथूराम शंकर शर्मा ✓

मङ्गलकामना	१४८
शंकर मिलन	१५१
रसबिहीन के लिये कविता वृथा है	१५२
अन्ध जगन्		..	१५३
पितृदेव क्या थे और मैं क्या हूँ ...			१५४
आत्म-बोध	..		१६०

३. श्रीधर पाठक

सज्जडा गाथ	१६३
जादूभरी धीला	१६५
स्वर्गीय बीणा		..	१६७
ओ घन श्याम !		...	१६९

४. बालमुकुन्द गुप्त

श्रीराम स्तोत्र	...		१७२
-----------------	-----	--	-----

विषय

पृष्ठ

१४.	अयोध्यासिंह उपाध्याय ✓		
	वीरवर सौमित्र —	...	१७५
	फूल और कांटा —	...	१८१
	आंसू —	...	१८३
१५.	जगन्नाथदास रत्नाकर		
	हरिश्चन्द्र परीक्षा —	..	१८६
१६.	देवीदास पूर्ण		
	मृत्युञ्जय	...	१९३
	मन बन्दर	...	१९७
१७.	रामचरित उपाध्याय ५.		
	वीरवचनावलि	...	१९८
	विधि विहन्यना —	...	२००
१८.	अमीर अली		
	अन्योक्ति सुमन	..	२०३
१९.	गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही-त्रिशूल' ✓		
	सत्य	...	२०६
२०.	रामचन्द्र शुक्ल ✓		
	अद्वैत की आह ✓	...	२०९



हिन्दीविलास

प्रथम दर्ग

तुलसीदास रामायण

सुनत लगन के पचन कठोर । परनु सुधारि धरेउ कर धोरा ॥
 अरु जनि देखै दोष मोहि लागू । कटु-बादी बालक बध जांगू ॥
 बाल विलोकि बहुत मैं बांचा । अरु यह मरनहार भा नांचा ॥
 कौंसिक कहा हृमिय अपराधू । बाल दास सुन गनहि न नाधू ॥
 कर कुठार मैं अकरन कोही । आगे अपराधी गुरु दाहो ॥
 उर देन छाटै दिनु मारे । जेवन कौंसिक सोल तुम्हारे ॥
 ननु एहि काटि कुठार कठोर । गुरुहि उरिन होनेहें मम धारे ॥

गाधि-सुनु फल हृदय हँसि मुनिहि हरि अरु मूढ ।

अज्ञगव मंडेउ उरु जिमि अजहं न दूक अदूक ॥

कहेउ लगन मुनि सोल तुम्हारा । को नहि जान विदित ममारा ॥
 माता पितहि उरिन भये नाँके । गुरुहित रहा सोच दड़ जो के ॥
 सो जूहु-हमरेहि माये कादा । दिन चलि गयउ ब्याज बहु दादा ॥
 अब आनिय व्यवहारिया दोलन । नुरत देउ मैं धैला खालो ॥
 मुनि कटुपचन कुठार सुधार । हाय हाय सब सभ पुठारा ॥
 भुंगुवर परनु देखैबहु माँही । विप्र विचारि बचउ नृप दाही ॥
 मिलेन कबहुं नुभउ रन गाढ़े । द्विज देवता परहि के बाढ़े ॥
 अनुचित कहि सब लोग पुकारे । ग्युर्गति सैनहि लगन निवार ॥

लगन उर आहुति नरिम भुंगुवर काय फुलानु ।

बढ़त देखि जलमन धवन बोले रघु-कुल-भानु ॥

दूध-मुत्र करिय न जोह ॥

जौ पै प्रभु प्रभाउ कछु जाना । तौकि घराघरि करइ अघाना ॥
 जौ लरिका कछु अघारि करहीं । गुरु विनु मानु मोद मन भरहीं ॥
 करिय कृपा सिमु सेवक जानी । तुम्ह सम मोल धीर मुनि हानो ॥
 राम बचन मुनि कछुक जुडाने । कहि कछु लपन बहुरि मुमुकाने ॥
 हंसन देखिन मर्मि मख रिम व्यापी । राम तोर भाला बड़ पापी ॥
 गौर शरीर स्याम मन माहीं । कालकूट-मुख पयमुख नाहीं ॥
 सहज टेढ़ अनुहरइ न नाहीं । जांच मोंच सम देख न मोढ़ी ॥

लपन कहेउ जमि मुनह मुनि क्राव पाप कर मूल ।

जेहि धम जन अनुचिन करहि करहि धिम्ब प्रतिकूल ॥

मैं तुम्हार अनुचर मुनि-नाथा । परिधरि काप करिय अथ दाया ॥
 दूट चाप नाहि जुनि रिमाने । बैठिय हाडहि पाय पिराने ॥
 जौ अनि प्रिय तौ करिय उपाइ । जारिय काउ बड़ गुनो बालाई ॥
 बोलत लपनाई जनक दयाला । मष्ट करहु अनुचित भल नाहीं ॥
 घरघर कापहि पुनन नारा । शत्रु कुमार ग्यात बड़ भारी ॥
 भृगुपति मुनि मुनि न भय बाना । राम तन चरइ हाड घनहाना ॥
 बोलै रामहि दा नारा । बकहु बिचारा बन्धन नारा ॥
 मन मनोन तनु मुन्दर कैस । विषय राम भग कनक घट जैस ॥

मुनि लछमन बिदम बन्धन नयन नारा राम ।

गुरु समान गवन महुच गोरु न बन्धन दम ॥

अनि विनाल मृदु मलिन बन्धन बन्धन नारा नारा नारा ॥

सुनहु नाथ तुम्ह सहज मुजाना । घालक वचन करिय नहिं काना ॥
 घररै घालक एक सुभाऊ । इन्हहिं न सन्त घिदूपहिं काऊ ॥
 तेहे नाहीं कछु काज विगारा । अपराधी में नाथ तुम्हारा ॥
 कृपा कोष धध धंध गासाई । मो पर करिय दास की नाई ॥
 कहिय बेगि जेहि विधिरिस जाई । मुनि नायक सोई करउँ उपाई ॥
 कहि मुनि राम जाय रिस बैसे । अजहुँ अनुज तव चितव अनैसे ॥
 एहिके कंठ कुठार न दोन्हा । तो में काह कोष करि कीन्हा ॥

गर्भ स्रवहिं अवनिपरवनि मुनि कुठार गति घार ।

परमु अछत देखेउँ जियत वैरो भूप-किशोर ॥

बहइ न हाथ दहइ रिस छाती । भा कुठार कुंठित नृप घाती ॥
 भयेउ वाम विधि फिरेउ सुभाऊ । मोरे हृदय कृपा कसि काऊ ॥
 आजु दैव दुख दुसह सहावा । मुनि सौमित्र घहुरि सिरु नावा ॥
 वाइ कृपा मूरति अनुकूला । बोलत वचन भरत जनु पृला ॥
 जौ पै कृपा जरहिं मुनि गाता । क्रोध भये तन राखु विधाता ॥
 देखु जनक हठि घालक एह । कोन्ह चहत जड जमपुर गेहू ॥
 बेगि कहु किन आखिन ओटा । देखन छोट खोट नृप ढोटा ॥
 विहंसे लपन कहा मुनि पाहीं । मैदे आखि कतहुँ कोउ नाहीं ॥

परशुराम तव राम प्रति घाले सर अति क्रोध ।

सम्भु सरासन तोरि सठ करसि हमार प्रबोध ॥

बन्धु कहइ कहु संमत तोरे । नृ छल विनय करसि कर जारे ॥

जय सुर-विप्र-धेनु-हित-कारी । जय मद-भोह-कोह-भ्रमहारी ॥
 धिनय मील कदना गुन मागर । जयति वचन-रचना अनितगर ॥
 मेथरु मुखद गुमग मय अङ्गा । जय सरीरद्वि-कोटि अनङ्गा ॥
 करउँ काद मुख एक प्रशंसा । जय महेस-मन-मानस-हँसा ॥
 अनुचिन वचन कहेउ अशाना । छमहु छमा मन्दिर दोउ भावा ॥
 कहि जय जय जय ग्धु-कुल केतू । भृगुपति गये वनहिँ तप हेतू ॥
 अपभय मरुल मदीप डेगने । जहँ तहँ कायर गयहिँ पराने ॥
 देवन दान्दी दुन्दभी प्रनु पर वरपहिँ पूज ।
 हयने पुर तर नारि मय मिठा माह भय सूल ॥

*

*

*

मन्थरा-कैकेयी-सम्वाद

बाजहि बाजन विविध विधाना । पुर प्रमोद नहि जाइ धराना ॥
 भरत आगमनु सकल मनावहि । आवहि बेगि नयन फल पावहि ॥
 हाट बाट घर गली अयाई । कहहि परस्पर लो.ग लुगाई ॥
 कालि लगन भलि केतिक वारा । पृजिहि विधि अभिलाषु हमारा ॥
 कनक-सिंहासन सांय मनेवा । बैठहि राम हांइ चित चैता ॥
 सकल कहहि कथ होइहि काली । विघन मनावहि देव कुचाली ॥
 तिहहि सुहाइ न अवय बधावा । चारहि चांदनि राति न भावा ॥
 सादर वालि विनय नुर करहो । दारहि दार पांय लै परहो ॥
 विपति हमारि बिलोकि बहि भातु करिय सोइ आजु ।
 राम जाहि घन राज तजि हांइ सकल सुरकाजु ॥

मधुर संगीत रसमयमयी । बंधु पदलिख बस संगरी ॥
 लोभ मनु मनु मतिमयी । राज मनु मनु बलव ररी ॥
 मेघमि मलय मलय मीहि मीहि । मरुति मरु मरु बल पीहि ॥
 मरु तुलार बंधिपति मरी । कनक कनक मरी होइ बरारी ॥
 रमहि तुलार पर मरु विमरी । मरुति तुलार मरु मरी रीमरी ॥
 रीम मरुति मरुति कनकरी । रसमोदकमय रस मरु ॥
 मरु मरु मरुति रस मरु मरी । मरुति मरुति मरी मरु मरी ॥
 मरुति मरु मरुति मरु मरी । मरुति मरुति मरी मरु मरी ॥

मरी मरी मरीति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति

मरीति मरु मरु मरुति मरी मरी मरीति मरुति मरुति मरीति

मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति
 मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति
 मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति
 मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति
 मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति
 मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति
 मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति
 मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति

मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति

मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति मरुति

कुधरी करि कबूलि कैकेई । कपटहुरी उरपाहन देई ॥
 लखइ न रानि निकट दुख कैसे । चरइ हरित वन धलिपसु जैसे ॥
 सुनत बात कहु अन्त कठोरी । देवि मनहु मधु माहुर घोरी ॥
 कहइ येरि मुधि अहइ कि नाहीं । स्वामिनि कहिहु कथा मोहि पाहीं ॥
 दुइ घरदान भूष सन याती । मांगहु आज जुधावहु छाती ॥
 सुतहि राजु रानहि धनवान् । देहु लेहु सब सबति हुलान् ॥
 भूषत राम सपथ जय करई । तब मांगहु जेहि धचत न टरई ॥
 होइ अकाजु आजु निस दीने । धचनु मोर प्रिय मानेउ जो ते ॥

पह पुपातु करि पातकिनि फहेसि कोपगृह जाहु ।

फात्र सँवारिहु सजग सब सहसा जनि पतियाहु ॥

कुधरिहि रानि प्रानप्रिय जानी । धार धार धडि दुद्धि दर्यानी ॥
 तांदि सम हितु न मोर संसारा । पहे जात कर भइसि अधारा ॥
 जो विधि पुरय मनोरथु काली । परत तांदि पपनूति आली ॥
 पटुविधि येरिहि आठर देई । कोपभवन गवनी कैकेई ॥



तब तब तुम्ह कहि कथा पुरानी । सुन्दरि समुझायेहु मृदु बानी ॥
कहउं सुभाय सषय सत मोही । सुमुखि मातु हित राखउँ तोही ॥

गुरु स्मृति सम्मत धरम फल पाइअ विनहिं कलेस ॥

दृढ यस सय संकट सहै गालब नहुप नरेस ॥

मैं पुनि करि प्रमान विनु बानी । बेगि फिरय सुनु सुमुखि सयानो ॥
दिवस जात नहिं लागिहि बारा । सुन्दरि सिखयन सुनुहु हमारा ॥
जौ दृढ करहु प्रेम यस यामा । तौ तुम्ह दुख पाउय परिनामा ।
फानन कठिन भयंकर भारी । घोर घाम हिम बारि बयारी ।
कुस कंटक मग काँकर नाना । पलय पयानेहिं विनु पदगाना ।
चरन कमल मृदु मंजु तुम्हारे । मारग अगम भूमिघर मारे ।
कन्दर छोड़ नदी नद नारे । अगम अगाध न जाहिं निहारे ।
मातु बाप बृक केशरि नागा । करहिं नाद सुनि धीरज भगा ।

भूमि सयन बलकल बसन अमन कन्द फल मूल ।

तेहि सदा सष दिन मिलहि समय समय अनुकूल ॥

नर अहार रजनीचर करही । कपट बेप विधि कौटिक करही ।
लागइ अति पदार कर पानी । विविन विपनि नहिं जाइ बखानी ।
ख्याल कराज विदंग बन घोरा । निसिचर निहर नारि नर घोरा ।
हएहिं धीर गहन मुधि आये । मृगलोचनि तुम्ह मोरु सुभाये ।
हंस गवनि तुम्ह नहिं बन जोगू । सुनि अयजमु मोहिं देखि लोगू ।
मानम सनिन मुधा प्रतिनाना । जियइ छि लखन पयोधि मराजी ।



हिन्दोविलास

आखिर यह तन साक मिलैगा,
कदा फिरत मगरूरी में ।
कदै कबोए सुनो भाइ सावो,
मादिय मिले सधूरी में ॥

❀ ❀ ❀

कुल ग्योये कुल उचरै कुल राखे कुल जाय ।
 नाम अनुल को मैटिया सब कुल गया दिलाय ॥
 कविरा बेड़ा जरजरा कृते छेद हथार ।
 हरए हरए तरि गये यूड़े जिन मर भार ॥
 मैं भँवरा तोहि यरजिया यन यन दास न लेय ।
 अटकैया कहँ बैल सं तहपि तडपि जिय देय ॥
 बाडो के विच भँवर था कलियां लेता बास ।
 सो तो भँवर उडि गया तजि बाडो की आस ॥
 भय बिनु भाव न ऊपजै गय बिनु होय न प्रीति ।
 जब हिरदे से भय गया मिटी सकल रस रीति ॥
 यह जग काढी काढ की चहुँ दिसि लागी आगि !
 भीतर रहा सो जरि मुआ साधू उधरे भागि ॥
 यहि बिरिया तो फिर नहीं मन में देखि विचार ।
 आया लाभ के कारन जनम मुआ मत हार ॥

शब्द का अंग

सोने सुने विचारि है ताहि सद् मुख देय ।
बिना समस्त सदै गहै कछु न लाइ तैह ॥
नन्दहि नारे नरि गये नन्दहि तदिया राज ।
जिन दिन सद् पिछानिया नरिया दिन का काज ॥
सद् हनार हम सद् के सद् प्रम का रूप ।
जो चारै दीशार को परन सद् का रूप ।
काल किं तिर डरै जीवहि नवर न आइ ।
कह कबीर गुरु सद् गहि जन से जीव बचाइ ॥
सद् बरदार बन नही जो कोई जानै मोत ।
होत वो जानै मिलै सद्हि मोत न दोत ॥

मंजुष मन्द उचारिये अहं जानिये नाहि ।
 तेना दीनम नृपक में मयू मी मुन माहि ॥
 बह मोनी मय जानियो पुढे पोन के माय ।
 यज तो मानी मयू का बेदिरहा मय गाव ॥
 जत्र मय मय भूट है मय भग्मा जग कंठ ।
 मय मय जाने बिना काणा हंस न होय ॥
 मय मयू नित्र जानिके त्रिन कंठहा पगुन ।
 काग कुर्मनि मज्जि मय दूबे मने मी मय जल जीनि ॥

१

२

३

हिन्दोविज्ञास

कहे कबीर पुकारि के कोई संत विवेको होय ।
जामे सन्द विवेक है छत्र धनो है सोय ॥
जीव जंतु जलहर पतै गये विवेक जो भूल ।
जल के जलवर यो कहैं हम उद्वगन सम तूल ॥



निष्कर्ष

रहन नहि देन दियाना है ।

यह संसार कगड़ की पुढिया,

है पड़े घुल जाना है ।

यह संसार कटे की बाड़ी,

इसल पुलस कर नर जाना है ॥

यह संसार नरु औ नांहर,

आग लगे बरि जाना है ।

कहत कबीर तुमो नहि साधो,

तन तुम नान दिकाना है ॥

(मृदुभाष)

बाल लीला

तुमुने चरत ग्यान मनि आगन,
मान रिता दाऊ देखतु गी ।
कषट्ठु छ दिककिलान मुख हरत,
कषट्ठु जननी मुख जगन रा ॥
लटहन लटहन लटित भास पर,
कादर बिम्बु धूरा उपर रा ।
दण गोभा नयननि देखे जा ।

अलि अवलो गिरि आई ॥
 नील श्वेत पर पीत लाल मणि,
 लटकत भाल हराइ ।
 शनि गुरु अमुर देव गुह मिलि,
 मानौ भौम सहित समुदाइ ॥
 दूध दन्त युति कहि न जाय अति,
 अद्भुत एक उपमाइ ।
 किलकत हँसत दुरत प्रगटन,
 मानौ घन में बिगुनु छटाइ ॥
 मण्डित बचन देत पूरन मुख,
 अलप जलप जल पाइ ।
 घुडरुन चलत रेणु तनु मण्डित,
 सूरदास बलि जाइ ॥
 गह्वे अंगुरिया मुवन को,
 नन्द चलन सिखावत ॥
 अरधराय गिरि परत हैं,
 कर देखि उठावत ॥
 बार बार बकि श्याम सो,
 कछु बोल बुलावत ।

मेलनि दूरि जात कउ काह्दा ।
 आजु सुन्यो मैं हाऊ आयो,
 तुम नहि जानत नाह्दा ॥
 यक सरिका अबही भजि आयो,
 रंजन देख्यो ताहि ।
 कान तोरि यह लेत सबनि को,
 लुटिअ जानत जाहि ॥
 पला न बेगि सरे जैये,
 भाजि आपने धाम ।
 गर ग्याम यह धान मुनन ही,
 पानि निवे बलगाम ॥

दूरि मेलन अनि जाउ सजन,
 मेर हाऊ आवे हँ ।
 नय हँमि पानि काह्द रि मैया,
 इनका किछं पटावे हँ ॥
 वसुन्ता क नट धेनु पगवन,
 जहा मरन बन माऊ ।
 पैटि बलाप व्याज गहि नाच्यो,
 लहा न देवे हाऊ ॥

अब दरपत सुनि सुनि ये चातें,
 कहन हँसत बलदाऊ ।
 सप्त रसातल शेषासन रहि,
 तब की सुरत भुलाऊ ॥
 चार वैद लै गयो शंख सुर,
 जल में रहेऊ लुकाऊ ।
 भीन रूप धरिके जव मारेऊ,
 तबहि रहे कहँ हाऊ ॥
 मधि समुद्र मुर असुरन के हित,
 मन्दर जलहि खसाऊ ॥
 कमठरूप धरि धरनि पीठ पर,
 सुख पायो सुरराऊ ॥
 जव हरणाक्ष युद्ध अभिलाषे,
 मन में अति गरबाऊ ।
 धरि वाराह रूप रिपु मारेउ,
 लै क्षिति दन्त अगाऊ ॥
 धिक्कट रूप अवतार धरेउ जय,
 सो प्रह्लाद घताऊ ।
 धरि नृसिंह जय असुर विदारेउ,
 तहां न देख्या हाऊ ॥

गोवर्द्धन लीला

प्रथमदि देउ गिरिदि पहाय ।
बसबावनि करौ चुरन,
देउ घरनि बिलाय ॥
मेरि इन मदिमा न जानी,
प्रगट देउ दिम्याय ।
जल वर्गि अत्र धाइ हारौ,
लाग देउ बहाय ॥
भान भेलन रहे नीकै,
करि कर्माय बनाय ।
दस्य दिन मोदि देन पूजा,

दरुं सोच मिटाय ॥
 गोप करि सुरराज लीन्हें,
 प्रदल मेष मुलाय ।
 गिरि मलित सुरपति कहत पुनि,
 परी प्रज पर भाय ॥
 नूनहु मूर कहत हैं मषया,
 धेगि परी मागय ॥

वरधि परधि मष हारे पादर ।
 प्रज के लोगनि भाय पहायहु,
 इन्द्र हगहि करि आदर ॥
 काग जाय धेहें प्रभु आगे,
 करि हैं घटुत निरादर ।
 हम धर्पत धर्पत जल सोमर,
 प्रजधामी मष सादर ॥
 पुनि गिरि करत प्रलय जल धर्पत,
 कहत भये सय पादर ।
 नूर गाय गोसुत सय गाल्यो,
 गिरिवरधर प्रज नागर ॥

गृम्दावन प्रवेगु शोभा

मैरा री न चोली गाइ ।
 मिमल म्दान विमलम मासो,
 मरा गाइ विमल ॥
 को न चर्याइ तूँइ बसनाइ,
 चाना होइ विवाइ ।
 नइ होइ नहि नहि नहि,
 म्दान हा नहि नहि विमल ॥
 मै म्दान चाना नहि नहि,
 चोइ मर बहाइ ।
 मर म्दान मर नहि बहाइ,
 मर नहि विवाइ ॥

जयै रथ भयो दृष्टि अगोचर,
लोचन अति अकुलात ॥
सयै अजान भई यहि औसर,
अति दिग गहि सुत मात ।
सूरदास स्वामी के बिछुरे,
कौड़ी भरि न बिरात ॥

नोके रहिये यशोदा भैया ।
आयेगे दिन चार पांच में,
हम हनुमन्त दोउ भैया ॥
वंशी बेलु विषान देखियो,
और अरेर सदेरो ।
तै जिनि जाय चोराय राधिका,
कछु तिलौना मेरो ॥
जा दिन ते हम तुम ने बिछुरे,
कोहु न कहै कन्हैया ।
जब समय लटि कियो न कलेउ,
कि पियो नहि कहेया ॥
कहाँ कछु आवे,

जय रय भयो दृष्टि अगोचर,
लोचन अति प्रकुलात ॥
सयै अजान भई यहि औसर,
अति दिग गहि नुव मात ।
सूरदास स्वामी के बिलहुरे,
कौड़ी भरि न बिकात ॥

नोके रहिये यशोदा भैया ।
आवेगे दिन चार पांच में,
हम हलधर दोउ भैया ॥
दंशी बेगु बिभान देखियो,
और अवेर सदेरो ।
तै जिनि जाय चोराय राधिका,
कछू बिलौना मेरो ॥
जा दिन ते हम तुम ते बिलहुरे,
कोहु न कहै कन्हैया ।
प्रात समय उठि कियो न कलेऊ,
सांनि पियो नहि पैया ॥
कश कहौ कहु कहत न आवे,
दशमति जेतो दुख पायो ।

चारिहु दिवस आइ मुख दीजै,
सूर पहुनई सूवर ॥

अब नन्द गइयां लेहु संगहार ।
हम तो तुम्हरे आन परगट,
गौ चराइ दिन चार ॥
दूध दयि सब चोर खायो,
तुम जो कियो प्रतिपार ।
सूर के प्रभु चले ब्रज तजि,
कपट दास्य फार ॥

पाछेहि चितवत मेरे लोचन,
आगे परत न पाइ ।
मन हर लियो माधुरी मूरति,
कहा करौ ब्रज जाइ ॥
पवन न भई पताका अन्धर,
भई न रय को अङ्ग ।
रेणु न भई चरण लपटावी,
जाति वहां लौ सङ्ग ।
केहि विधि कर कैसे सजनि करि,

कब जु मिलैं गोशाल ।
 सूरदास प्रभु पठै मधुपुरी,
 मुरझि परीं मज्र यात्र ॥

ऊधो हुवो जननि सों मिलियो,
 अरु कुरालात कदोगे ।
 बाबा नन्दहि पालागन कहि,
 पुनि पुनि चरण गइोगे ॥
 जो दिन ते मधुवन हम आये,
 सुधि नाहि तुम लोन्हीं ।
 दे दे सौंठ करोगे हितकरि,
 कहा निदुराई कीन्हीं ॥
 यह कह्यो दलराम श्याम अघ,
 आवेगे दोऊ भाई ।
 मूर कर्म की रेत मिटे नहि,
 यह कह्यो यदुराई ॥

गोपालहि वारे ही की टेव ।
 जानति नहीं कहा ते सोखे,
 खोरी की दस छेव ॥

तब फलु दूध दालो लै खाते,
 करि रहती हौं पानि ।
 कैसे सहो परत है मो पै,
 मन माणिक की हानि ॥

ऊधो नन्दनंदन सो कहियो,
 राजनीति समुझाइ ।
 राजहु भये तजत नहिं लोभहि,
 गुम नहीं यदुराइ ॥
 बुद्धि धिवेक अरु बचन चातुरी,
 पहिले लई चुराई ।
 सूरदास प्रभु के गुण ऐसे,
 कासों कहिये जाई ॥

फिरि फिरि कहा सिखावत मौन ।
 बचन दुसह लागत अलि तेरे,
 ज्यो पजरे पर लौन ॥
 सोंगो मुद्रा भस्म अधारी,
 अरु आराधन पौन ।
 हम अवला अहोर शठ मधुकर,

विनय पात्रिका

कहू के कुल नाहि दिखारव ।

अविगति को गति कहौ कौन सो पतिन सदन को वारव ॥

कौन जाति को पाति म्दुर को जिनको प्रभु व्योहारव ।

भोजन करत तुष्टि पर उनके राजमान पद टारव ॥

ओहो इन्न फर्म के ओहो ओहो हो दोलावत ।

अनव नहाय सूर के प्रभु की भक्त हेतु पुनि आवत ॥

गोविन्द प्रीति सदन को मानव ।

जो जेहि भाष करै जन सेवा अन्तर को गति जानव ॥

बेर पालि कहु तडि है नीठे भिड़ही दीने जाय ।

जूठन की कछु शक न कोन्दी भक्त छिये सदाभार ॥
 समस्त भक्त मोत दित्तहारो स्वाम विदुर के आये ।
 प्रेमहि दिवत विदुर अपित प्रभु कदली दिलरा म्याये ॥
 कौरव काज चले अपि आपुन शक के पत्र अपाये ।
 सूरदास करुणा निधान प्रभु युग युग भक्त ददाये ॥
 अब हौ नाच्यो बहुत गोपाल ।

काम कोष की पहिरि चोलना कठ त्रिपय की मात ॥
 महागोद के नूपुर पाजत निम्न शब्द रसाल ।
 भरम भरगो मन भयो पखायज दरप असगल बाल ॥
 तुम्हना नाद करति घट भोतर नाना विधि दै बाल ।
 माया की कटि कैटा बांध्यो लोभ तिडक दिया भल ॥
 काटिक कला काहि दिखराई जल थल सुवि नहि काल ।
 सूरदास की सवै अविद्या दूरि करहु नद लाज ॥
 कृपा अब कीजिये बलि जाई ।

नाहिन मेरे अनत पहुँ अय पद अम्बुज बिन ठाउँ ॥
 हौ अशुची अकृती अपरार्थी सम्मुख होन लवाउँ ।
 तुम कृपाल करुणानिधि केशव अधम उधारण नाउँ ॥
 काक द्वार जाय हौ ठाढ़ो देखत काहि मुहाउ ।
 अशरण शरण विरद व्यापक तुम हौ कुटिल काम सुभाउँ ॥
 कनुपी परम गज्जीन दुष्ट हौ संत्यों ली न बिकाउँ ।

सुख पतिव पावन पद कम्पुज पावन करो पत्माई ॥

नख जू खर के मंजि बपारी ।

पवित्रन में विरमाव पवित्र ही पावन नम मुखांगी ॥

सुख पतिव नमिरे पासंगी ब्रह्मानीन को ही सु विचारो ।

भावे नख नखे मेरी मुनि भजन दियो हठि करो ॥

सुख पतिव तुम को रमावति पद न करो जिय गरी ॥

सुखदान मंजो तुष माने को ही नम निम्नारी ॥

छांति मन हरि विरुद्धन को मंग ।

जहा मयो पद पात कराये विर नमि नखन मुखंग ॥

जहाँ संग सुखी उरई परत भजन में भग ।

पान प्रीति नद लीन मोह में निशि दिन रात उमंग ॥

जगदि बान कनूर गवाये स्वात नखाये गंग ।

गर को बहा अरुण लीन नखन भुव भुव अंग ॥

पान पतिव पार नमि भेदव रीति करत निरंग ।

सुखदान गह काली पानरि पद न दूखी रंग ॥

सदै दिन एक से नहि जात ।

सुनिन भगवि लेहु करि हरि की को लमि तन कुशल ॥

कदरुं कदल पान पाव के देव देव जात ।

पदरुं नम नम भुनि उरीत भोजन को विरुद्ध ॥

पानन गेह ही गेहो भक्ति परत अरुणा ॥

जय हय हय जय जय जय जय जय जय जय ॥
 ना निधि को लोभित करी जय जय जय जय ॥
 मम मम मम मम मम मम मम मम ॥

जय मे जय मे जय मे ॥

जय जय जय जय जय जय जय जय ॥
 जय जय जय जय जय जय जय जय ॥
 जय जय जय जय जय जय जय जय ॥
 जय जय जय जय जय जय जय जय ॥
 जय जय जय जय जय जय जय जय ॥

उप हन हन गगनो यः पापः प्रेत प्रेत पति भग्नो ॥
 ना विधि यो नरोत्तम बन्धो जन गगनो नैव नृपायो ।
 सुभाष भगवन् भजन विन नाप्य जगन् वेषायो ॥

अथ भी उगो देव सुभाषी ।

शिरः पाद पति पयो न मानं नन यो दसा निग्नो ॥
 नन पयो ननै पति ननैव नन नन पति पयो ।
 निदि नन ननै ननै ननै ननै ननै ननै निग्नो ॥
 ननै ननै ननै ननै ननै ननै ननै ननै निग्नो ।
 ननै ननै ननै ननै ननै ननै ननै ननै निग्नो ॥

(नरोत्तमदास)

सुदामा चरित

लोचनकमल दुग्गमोचन निलक भाल,
श्रवणन कुडल मुकुट घरे माथ हैं ।
ओढ़े पोत बसन गले में वैजयन्ती माला,
शर चक्र गदा और पद्म लिये हाथ हैं ॥
कहत नरोत्तम सेंदीपन गुरु के पाम,
गुरु ही कहत हम पदे एक साथ हैं ।
द्वारका के गये हरि दगिद हरेगे पिय,
द्वारका के नाथ वे अनाथन के नाथ हैं ॥१॥
शिशु हैं सगरे जग का ठिय,
नाका बहा अब देति है मिच्छा ।

जो पै दखि सनाह बिश्यो,
 ता पै काहू के मरे न जात अजानी ॥४॥
 काहे पद दृष्टी छानि गायो भीम मांमि आनि,
 बिना गये विमुख रहन देव मित्रई ।
 ने हैं दोनवम्भु दुगों देव के दयालु ह्वै हैं,
 दे हैं काहु मनों गो हों जानत अगवई ॥
 दारुवालों जानिय केही अजमात मुम,
 काहे को सजान मई कौन सी बिचिरी ।
 जा पै सब जगगये दखि ही गताये गो पै,
 कौन काज आई है कृपानिनि की मित्रई ॥५॥
 नैं तो चही नीची गुन बगान दिन ही की यह,
 हीनि मित्रई की नि प्रोत सागगाइये ।
 बिल के भिते में बिल चाहिये परगपर,
 मित्र का नें जइव ता आपहु रिमाइये ।
 व है मर्यादा प्रोति बैल समान भूष,
 दनी यह सब जाय कदा महुषाडये ।
 दुख गुम सब दिन काहे हा बनेगा नृप,
 बिचिरी वो पै दल मित्र के न जगइये ॥६॥
 दारुवा जगु न दारुवा जगु न,
 काहू है यम वही मरु मरे ।

(रहीम)

रहीम के दोहे

सर मूखे पंछी उड़ै आरं सरन ममाहि ।
दान मान विन पन्ध के कहु रहीम कहै जाहि ॥ १ ॥
भूर धरत निज सीम पर कहु रहीम कहै काज ।
जति रज मुनि पत्नी तरा सो दूदन गजगज ॥ २ ॥
दान मघन को लखत हैं दानहि लखै न कोइ ।
जो रहीम दानहि लखै दान बन्धु सम होइ ॥ ३ ॥
राम न जाते हिरन संग सीय न रावन साथ ।
जो रहीम भावो कहे होत आपन हाथ ॥ ४ ॥

शीत हरत तम हरत निव मुयन भरत नहि चूक ।
 रहिमन तिहि रथि को कहा जो घटि ललै उलूक ॥४५॥
 नहि रहिम फछु रूप गुन नहि मृगया अनुगम ।
 देसो स्थान जु राखिये भ्रमत भूख ही लाग ॥४६॥
 कागज कोसों पुरा सदजहि में घुर जाइ ।
 रहिमन यह अचरज लखो सोऊ रेंचन बाइ ॥४७॥
 रहिमन कहि इक दीप ते प्रगट सबै श्रुति होइ ।
 ठनु मनेही कैसे दुरे दग दीपक जरु दोइ ॥४८॥
 जिहि रहिम चित आपनो कीन्हो चतुर चकोर ।
 निरि। बासर लागी रहै कृष्णचन्द्र की ओर ॥४९॥
 कहि रहिम धन बढ़ घटै जात धनिन की बात ।
 घटै बढ़ै उनको कहा घाम बेचि जे सात ॥५०॥
 जो रहिम होत कहुँ प्रभु गति अपने हाथ ।
 बा काँ धौ केहि मान तो आप बढाई साथ ॥५१॥
 तिहि प्रमान पलियो मल्लो जो सय दिन टहराई ।
 नमहि चले जल पारतें जो रहिम बडि जाइ ॥५२॥
 यो रहिम मुख दुख सटव बडे लोग सह सावि ।
 उबल चन्द्र नेदि माँति माँ अथयत ताही भानि ॥५३॥
 कहि रहिम सम्पति मगे बनत बहूत बहुरीति ।
 विपति कमौटी जे कमे तेई साँचे मीत ॥५४॥



सद्युध अद्युध की तेन कौ यह सरूप जिय भाव ।
 यल में रोहित कनल ज्यौ बधिर करन ज्यौ जान ॥१०३॥
 ऊँचे पद कौ पाय लघु होय दुख ही पात ।
 घन तैं गिरि पर गिरत जल गिरिहू तैं दरि जात ॥१०४॥
 दिना दिए न मिलै कछु यह सनमौ तय कोय ।
 होत तिसिर में पात वह सुपनि सपझ होय ॥१०५॥
 नितदिन सटकत वनक तुन परैतु छाँतति नाहि ।
 विननै सज्जन राखिर सो दिन सटकतु नाहि ॥१०६॥
 देखत कौ पै कछु नहीं मुख पै खल को प्रीति ।
 मृग वृष्णा में होति है ज्यौ जल की परतीति ॥१०७॥
 वचन विद्या लीविषै वदपि नीच पै होय ।
 पर्यो अनादन दौर कौ कंचन वस्त्र न कोय ॥१०८॥
 प्रीति हुँहूँ सज्जन के मन तैं हेत लुटै न ।
 कनल नाल कौ तौरियै वदपि मृत दृटै न ॥१०९॥
 प्रभु कौ चिता सदन की आसु न करियै नाहि ।
 जनन अगाऊ भरत है दूध नाव मत नाहि ॥११०॥
 सेवक सोई जानियै रहै दिगति में मंग ।
 वन क्षुधा ज्यौ घर में रहै साय इक रंग ॥१११॥
 बना सद्युग सीने रहै खल कौ कष्ट बसाय ।
 अग्नि परी तुन रहित मत आपदि तैं बुझि जाय ॥११२॥

सो निपात भय जगन पौ मय मिय तेन अनेन ।
 एव. एव. ई तेन है एव. एव. पौ तेन ॥६२३॥
 एन ई म अर. मूल म अरथी जगन जगति ।
 जानतु है एव. मयि है पवन वदायन नादि ॥६२४॥
 देवत ई जग जानु है तट ममता सौ मेल ।
 जानतु हो या जगन म देवत भूलो मेल ॥६२५॥

६

६

६

ऐरावत गज गिरिपति हिम नग कण्ठहार कल ॥
 सगर सुवन सठ सहस परस जलमात्र उधारन ।
 अगनित धारा रूप धारि सागर संचारन ॥
 कासी कहै प्रिय जानि ललकि भेट्यो जग धाई ।
 सपनेहुँ नहिं तजी रही अरु लपटाई ॥
 कहैं बंधे नव घाट एक गिरिवर सम साँहत ।
 कहैं छतरी कहैं मंडो पड़ी मनमोहत जोहत ॥
 धवल धाम चहुँ ओर फहरत धुजा पताका ।
 फहरत घण्टा धुनि धमकत धौसा करि साका ॥
 मधुरी नौबत बजत कहैं नारी नर गावत ।
 वेद पढ़त कहैं द्विज कहैं जोगी ध्यान लगावत ॥
 कहैं सुन्दरी नहान नीर कर जुगल बधारत ।
 जुग अम्बुज मिलि मुक्त मुच्छ मनु मुक्यनिकारत ॥
 धोवन सुन्दरि बदन करन अति हो छवि पावत ।
 पागिनि नाते साँस कलंक मनु कमल मिटावत ॥
 सुन्दरि ससि मुख नार मध्य इमि सुन्दर साँहत ।
 कसन धौल लहलही नवज कुमुदन मन मोहत ॥
 दीति जही जहँ जात रहत तितही टहराई ।
 गंगा छवि हरिचन्द कहूँ परनी नहिं जाई ।

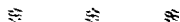
कै जल उर हरि मूरति बसति वा प्रतिविम्ब लखात है ॥५॥
 कवहुँ होत सत चन्द कवहुँ प्रगटत दुरि भाजत ।
 पवन गवन बस विम्बरूप जल में बहु साजत ॥
 मनु ससि भरि अनुराग जमुन जल लोटत डोलै ।
 कै तरङ्ग की डोर हितोरन करत फोलै ॥
 कै बाजगुडी नभ में उड़ी सोहत इत उत धावती ।
 कै अवगाहत डोलत कोऊ ब्रज रमनी जल आवती ॥६॥
 कृजत कहूँ कल हंस कहूँ मञ्जत पारावत ।
 कहूँ कारंटव उड़त कहूँ जलकुम्कुट धावत ॥
 चक्रवाक कहूँ बसत कहूँ धरु ध्यान लगावत ।
 सुरु पिरु जल कहूँ पियत कहूँ भ्रमरावलि गावत ॥
 कहूँ तट पर नाचत मोर बहु रोर विषय पच्छी करत ।
 जलयानन्दान करि मुख भरे तट संभा सब जिय धरत ॥७॥
 कहूँ बालुका विमल सकल कोमल बहु धाई ।
 उज्जल भलरत रजन सिटी मनु सरस मुहाई ॥
 पियके आगम हेत पांवटे मनहुँ विझाये ।
 रत्न रासि करि चूँ कूल मे मनु बगराये ॥
 मनु मुक्त मांग मोहित भरो श्याम नोर चिह्नान परसि ।
 मत गुन दायो कै नोर में ब्रज नियास लखि हिय हरसि ॥८॥

देशभक्त के आंसू

रोयट्टु मय मिलि कै आवट्टु भाग्य भाई ।
हा हा ' भारत दुर्दशा न देखी जाई ॥
सब के पहिले जेहि ईश्वर घन बल दोनो ॥
सब के पहिले जेहि सम्य विधाता कीनो ।
सब के पहिले जो रूप रङ्ग रस सीनो ।
सब के पहिले बिद्या बल निजगहि खीनो ॥
अब सब के पीछे मोई परत लखाई ।
हा हा ' भारत दुर्दशा न देखी जाई ॥ १ ॥
जई मये राजव हरिचन्द्र नरूप यवानी ।
जई राम युधिष्ठिर बामुदेव मर्धावी ॥

जहाँ भीम करन शत्रुओं की हत्या दिग्गामी ।
 तहाँ गयी मृत्युदा यहाँ अविद्या राखी ॥
 कब जब देखू तब दुःखदि दुःख दिग्गामी ।
 हा हा ! भारत दुर्गता न देखी जाई ॥ २ ॥
 तरि वैदिक जैन दुषई पुनरुत्तारी ।
 हरि कलर दुर्गा जयन सैन पुनि भारी ।
 दिन नात्नी दुधि बल बिद्या धन बहु भारी ।
 हार्दक्य आनस दुर्मति यन्त्र अविचारी ॥
 भये अन्य पदु सब दीन होन दिग्गामी ।
 हा हा ! भारत दुर्गता न देखी जाई ॥ ३ ॥
 अहरेन राज दुःख साव सजे मय भारी ।
 पै धन दिवेन पति जान दई जन ग्वारी ॥
 ताह पै महंगा दान गंग दिग्गामी ।
 दिन दिन दूने दुख ईन देव हा हा रो ।
 सब के उपर दिवस यो अफल जाई ।
 हा हा ! भारत दुर्गता न देखी जाई ॥ ४ ॥

रों इनमें बसने स्वर्गमें कार्य बलकारी ।
 यह है जिस मो तब ही पाव मिलायें ॥
 हरि भिन्न परम दिनु धन बल होत दुखायें ।
 आत्मो नन्द तन होत सुखित संतरी ॥
 सुख सो सरिहैं तिर बबन पदुका बल ।
 सब लखु योग्य भरत हो नन्द आन ॥१॥



जो दूजे को हित करै तौ खोवे निज काज ।
 जो खोयो निज काज तौ कौन धात को राज ?
 दूजे हो को हित करै तौ वह परवस मूढ ।
 कठ पुतरी सो स्वाद कष्टु पावै कष्टु न छूड ॥३॥



गुरुवश्यता

य लौ बिगरे काज नहि
तय लौ न गुरु कह्यु वेदि कहै ।
पै शिष्य जाइ कुराह तौ
गुरु सोस अंकुश हूषै रहै ॥

छातों सदा गुरु-वाक्य-वत्स
हम नित्य पर-आधीन हैं ।
निर्लोभ गुरु से मन्त्र जन हो
जगत में स्वाधीन हैं ॥

शारदी सुपमा

माद बिमल अतु माहं निमल नील अकाम ।
 निमानाथ पून उदित सोलइ कला प्रकाश ॥
 भाद समेर्वा बन रदि महमद महेदि सुवम ।
 नदी तीर कुते लगी सेत सेत बहु काम ॥
 कमत कुमदिनि मान मे कुते मामा दे ।
 भौर रुन्द जामे लागी गृत्रि गृत्रि राम लेत ।
 कमत जादनी, भजमुल, उदुगन माना मल ।
 काम कुत मनुगम वद मरद दिधी नव बात ।
 अत वद माद मनु दरे बाड ।
 काम कुत कुते बहे दिनि न माहे मनु मल कला ।

(यदरीनारायण चौधरी)

विजयी भारत

जय जय भारत भूमि भवानो ।

जाकी मुयश पताका जग के,

दमहुँ दिसि फहरातो ।

नय नुय नामघी पूरित श्यु,

नफल नमान सोहानी ॥

जाकी सोभा हरि अलषा अर,

दमरावती निमाना ।

धननूर जित उवा नीति उहें,

गढ़ द्रयम पहिचानी ॥

जाकी सन्निधि तुझ हजारेन;
 दरसन हूँ न खोजनी ।
 सहस्र सहस्र बरिसन दुख निव;
 नव जौ न गलानि सर झानी ॥

धन्य धन्य शूर सन जग,
 तू गत नन अबहुँ लोभानी ।
 शनै हीत कोटि जन,
 अबहुँ जाहि जोरि जुग पानी ॥

जिनमें मलक एकता की,
 तजि जग नहि सहनि सकानी ।
 ईत कुवा सहि धुरि प्रेम-धन
 बनहु सोई हवि धनी ॥

सोई प्रलय नुनवन गवित हूँ,
 नो पुरी धन धनी ॥

(प्रतापनारायण मिश्र)

जनम के ठगिया

साधा मनुषी अज्ञय दियाता ।

माया माह जनम के ठगिया,
तिनके रूप भुलाना ।
छल परपच करत जग धूनत,
दुख का मुग्य करि माना ॥

फिकिर तहाँ की तनिक नहीं है,
अत समय जहँ जाना ।
मुग्य ते धरम धरम गोहरावत,
करम करत मन माना ॥

हो मरुद पट पट को जानै,
 केहि पूछा करत कहाना ।
 केहि ते पदत माग्य घर पो,
 जापहि जैन बुलाना ॥

‘हिर्षा कर्षा सज्जन कर वात्सा’,
 दाय न इतनी जाना ।
 यहि मनुष्यां के पीले पजरै,
 मुख का कर्षा ठिकाना ॥

जा परवाप मुग्ध को चान्दे,
 साई परम सबाना ॥

ॐ ॐ ॐ

जाने जाने वनै तो कौनै,
करि तन मन ईक ठोरी ।

कोऊ काहु को नहि सायी,
भाव पिवा हुत गोरी ॥

अपने करन आपने संगी,
और भावना भोरी ।

सत्य सहायक स्वामि मुखद से.
लेहु प्रीति जिय जोरी ॥

नाहु तु फिर 'परवाणदरी',
कोऊपाव न पूछिहि तोरी ॥

ॐ ॐ ॐ

बिदुषी उबर्जे समता न तर्जै,
 ब्रज धार तर्जै मुकृति वर को ।
 सयवा सुधरै विधवा उबरै,
 सकलंक करै न किती घर को ॥

दुहिवा न दिक्कें कुटनी न टिकें,
 कुल घोर छिक्कें तरनै दर को ।
 दिन फेर पिवा वर दे सविता,
 करदे कविता कवि शंकर को ॥२॥

नृपनीति जगे न जनोति ठगे,
 भ्रमभूत लगे न प्रजाधर को ।
 मगड़े न मर्ये खल खर्ब लखै,
 मद से न रयै भट सगर को ॥

सुग्भी न कटे न खनाउ घटे,
 मुख भोग टटे टपट दर को ।
 दिन फेर पिवा वर दे सविता,
 कर दे कविता कवि शंकर को ॥३॥

मरिना समड़े लघुता न लहे,
 छटता उबड़े न परापर को ।
 शठता सटके सुदिता नटके
 प्रतिभा नटके न समुदर को

दिन्दोशिलास

विकसे विमला शुभ कर्मका
 पकड़े कमला भ्रम के कर कं
 दिन फेर पिता घर दे सकि
 कर दे कविता कवि शंकर क

मन जान जलें छलिया न छलें,
 गुल फूल फलें वज मत्सर को ।
 अप-दम्भ दबें न प्रपञ्च फलें,
 गुन मान नयें न निरुद्ध को ॥

सुमरे अप से निरखें रूप से,
 सुर पादप से तुम अक्षर को ।
 दिन फेर पिता घर दे सकि,
 कर दे कविता कवि शंकर को ॥



११

दरसे देश उदास, जाति अनुमूल नहीं है ।

शत्रु करें उपहास, मित्र सुखमूल नहीं है ॥

बड़े नावेदार किसी से मेल नहीं है ।

घर में हा हा कार, नुशी का खेल नहीं है ॥

१२

दातक चोगे खान पान पर अड़ जाते हैं ।

खेल मिलौने देवर पिछाड़ी पड़ जाते हैं ॥

पर मनमानी वस्तु बिना दस रह जाते हैं ।

हाथ हमारे काढ़ कलेजे तो जाते हैं ॥

१३

पूल पूल पर पूल फली फल खाने वाले ।

नाना व्यञ्जन पाक प्रसादी पाने वाले ॥

दूध रमाला आदि सुधारल पाने वाले ।

हाथ पने हम शाक चनों पर जीने वाले ॥

१४

नड़के लकड़ी बिन बिन कर ला देते हैं ।

इंधन भर का कान अवश्य पला देते हैं ॥

छ पचा दो तीन बार जल भर देते हैं ।

नांग नांग पर छाह नहेरी भर देते हैं ॥



क पान स्याविधि मन्त्र जपे,

पर देह पुराण विचार धरे ।

गुरु गोमय धार गह्वरा पने,
पान पान कुटुम्ब विस्तार धरे ।
कवि 'शंकर' ज्ञान विना न तरे,
सम प्रार विरे भक्त नार धरे ॥२॥

निगमागम मन्त्र पुराण पदे,

प्रतिपाद प्रगल्भ कलाय धरे ।

रच दम्भ प्रपंच पसार पने,

दन वचक वेष कनेक धरे ।

विनारे कर पान प्रमाद सुरा,
अभिमान दलाहल गाय मरे ।
कवि 'शंकर' गाढ़ महादधि से,
वक्त्राज विवेक विना न तरे ॥३॥

पर धार विस्तार विरक्त पने,

ठनि वेष घनाय प्रमत्त रहे ।

यकबाद अवोध गृहस्थ मुने,

शठ शिष्य अनन्य मुजान कोई ।

घुस घोर घमंड महा दन में,
विचरै कुलघोर कुपथ गह्वे ।

(लीधर पाठक)

उजड़ा गांव

कदहूँ न तहां पधारि ग्राम्य जन पग अब धरिहैं ।
मधुर भुलैनी नाहि नित्य चिन्ताहि विसरिहैं ॥
ना कितान अब समाचार तहें आय सुनैहैं ।
ना नाऊ को बातें सप को मन बटलैहैं ॥
लकड़हार को विरहा फदहें न तहें सुनि परिहैं ।
तान भवन आनन्द उदधि कदहें न उभरिहैं ॥
नां धौ पौढ़ि लोहा कान को तहें हरिहैं ना ।
भारी बलहि टिलाय सुनन बातें सुनिहैं ना ॥

जादूभरी धैली

कै यह जादूभरी विश्व वाजीगर धैली ।
 खेलत में नृति परी शैल के तिर पै फैली ॥
 प्रसुरूप प्रकृति कौं किधौ जयै जोपनरस छाये ।
 प्रेन केनि रस रंजि कनन रंगनहल मजाये ॥
 खिली प्रकृति पदरानी के नहलन पुलवारी ।
 खुली धरी कै भरी ठानु तिगार निदारी ॥
 प्रकृति यहाँ एकल्ल धैठि निज रूप मँवारवि ।
 पल पल पलटवि भेन हनिद हवि दिन दिन धारवि ॥

स्वर्गीय वीणा

क्यों है स्वर्गीय कोई बाला,
तुमझु बोलो बजा रही है ।
तुरों के संगीत की सी कैली,
तुरीली गुंजार झारती है ॥१॥

हरके स्वर में नवानवा है.

हरके पद में प्रबोन्दा है ।

निराली तर है औ लोन्दा है,

अलाप अदसुव निला रही है ॥२॥

अलस्य पदों से गत सुनावी,
वरत वरानों से मन बुनावी ।

ऊनूठे अटपट स्वरो में स्वर्गिक,

मुधा की धारा बहा रही है ॥३॥

कोई पुरन्दर की किकरी है,

कि या किसी मुर की सुन्दरी है।

वियोग तमा सी भोग मुषा,

हृदय के उद्गार गा रही है ॥४॥

कभी नई तान ेममय है,

कभी प्रकोपन कभी विनय है।

दया है दालिप्य का उदय है,

अनेकों धानक बना रही है ॥५॥

मरे गगन में हैं जिनने तारे,

दृष्ट हैं वदमस्त गत वै सारे।

सारे ^{सारे} ममस्त प्रमोद भर को मानों,

को उगलियों पर नचा रही है ॥

मुनी तो मुनने की गति वाली,

मद्यो हो जाकर के बुद्ध पठा ली।

है कौन जोगन ये जो गगन में,

चि इतनी चुनचुन मचा रही है ॥६॥

कहूँ कहूँ कड़कि सुनावहु विज्जु पतन टनकार ।
 कहूँ मृदु श्रवन करावहु भिल्लोगन भनकार ॥१६॥
 घन घन कीट पतङ्गन घर घर तिय गन तान ।
 पुरवहु रङ्ग विरङ्गन हे वहु ढङ्ग निधान ॥१७॥
 करि कृतकृत्य किसानन सन्वत सर सरसाठ ।
 सोचि सत्य तृन धानन तय निज धाम सिधाठ ॥१८॥
 समै समै पुनि आवहु पुनि जावहु इहि रीति ।
 सहज सुभाग बढावहु गहि मग प्राकृत नोति ॥१९॥
 प्रथित प्रेम रस पागहु पूरन प्रनय प्रतीत ।
 सदा सरस अनुरागहु हं घन ! दिनय विनीत ॥२०॥

दिग्दन्ती की द्विगुण दलक उठती छाती थी ॥
 विशिखशृन्द से नभ मण्डल था पूरित होता ।
 जो था दश दिशि घोच बहाता शोणित सोता ॥
 ग्लय बहि थी दहकती त्रिपुरान्नक धे कोपते ।
 जिस काल घोर सानिध धे रणभू में पग रोपते ॥११॥

अमर शृन्द जिसके भय से था धरधर कपता ।
 जो प्रचण्ड पूषण सा था रणभू में तपता ॥
 पाहन द्वारा गठित हुई थी जिसको काया ।
 विवध भयङ्कर मूर्तिमती थी जिसको माया ॥
 वह परम साहसी अति प्रबल मेघनाद सा रिपुदमन ।
 जिसके कोपानल में जला धन्य वह सुमित्रा सुश्रन ॥१२॥

कुण्ठितमति पौष्ट्य विहीनता परवशता से ।
 वे न सियामति अनुगत धे स्वास्थ्यवरता से ॥
 बरन हृदय में धातुभक्ति उनके थी न्यायी ।
 जिसने थी मांझिनी अपर भावों पर डारी ॥
 उनके जीवन हिमगिरि शिखर पर अमरावति से गयी ।
 राकारजनी चाँदनी सो स्नेह वीरता थी लसी ॥१३॥

वे वासर धे परम मनोहर दिव्य दरसने ।

पूजन और पाँटा

१. पूजन की पूजा में एक ही ।

एक ही पूजा करें है पूजा ॥

मन में एक ही पूजा का आदमी ।

एक ही का आदमी है पूजा ॥

मन में एक है पूजा का एक ही ।

एक ही का एक ही पूजा है पूजा ॥

पूजा का एक ही पूजा है पूजा ।

एक ही पूजा में एक ही पूजा ॥

एक ही पूजा में पूजा का पूजा ।

पूजा में पूजा है पूजा का पूजा ॥

आंसू

रीज दुनियाँ के दुगरी दित के दुलारे आंसू ।
प्रेमय पयो पियारों के पियारे आंसू ॥
मद से भरपूर भरे नैनो के तारे आंसू ।
बलि से भीले हुए जान के सारे आंसू ॥
जादि कवि जू के परम तृष्ट सतारे आंसू ।
कौन कह नसता है नहिना तेरी सारे आंसू ॥
शोक से भय से दभी पित्त डो दहरता है ।
हर्ष से दा दभी हरिभाँख से भर जाता है ॥
तब तू तहराके तपस आँखों में आजाता है ।
दित के समय भेद दुरत सोल के बदलाता है ॥

२३

‘जो आशा” कहि नृपति हर्ष जुत सीस नवायो ।
 नत्रिहि अपर समस्त राजकाजिन्हि युलवायो ॥
 सब सौ सहित वछाह बिदित बेगहि यह कीन्हो ।
 “हम सब राज समाज आज शेरपिराजहि दीन्हो” ।

२४

बेगहि वठि सिंहासन फौ प्रनाम नृप कीन्हो ।
 रोहितास्त्र घालकहि मदिपि सैव्यहि संग लीन्हो ॥
 चले राज वज्र हार्य विपाद न कछु उर आन्यो ।
 भूलि भाव सब और परु ऋण भजन ठान्यो ॥



ॐ ह्रीं क्लीं ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥
 श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥
 श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥
 श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

गणेशाय नमः ॥ गणेशाय नमः ॥
 गणेशाय नमः ॥ गणेशाय नमः ॥
 गणेशाय नमः ॥ गणेशाय नमः ॥
 गणेशाय नमः ॥ गणेशाय नमः ॥

(९)

यदि हस्तगतं स्मृतं ज्ञानं है ।
 एतत् ज्ञानं जगत्पदं मे हि यो ॥
 सदित् ज्ञानं उरु मुक्तिं मुक्तमना ।
 यत्नं तं तुम न्यायनं ज्ञानं यने ॥

(१०)

विनिर्गता प्रमाणं विना नरो ।
 न विनातं पनं वातं विना यथा ॥
 न यत्नं विनं जातं निदाय उरो ।
 नित्यं पानं नदीं विनं ज्ञानं ये ॥

(११)

विलग वारिधि ते न तरंग है ।

पृथक्ता घरु मन्द विचारही ॥

लहर अंबुधि दोनहुं अम्बु हैं ।

जगत ब्रह्ममयो विमि जानिये ॥

(१२)

कनक के घरु कंकन किङ्किनी ।

अमित आकृति के रचिये तरु ॥

कनक तें नही अन्य कहू तथा ।

सकल ब्रह्ममयो जग जानिये ।

(१३)

भवन में मठ में घट में दया ।

गगन देखि अनेक परै तरु ॥

विमल बुद्धि को नम एक है ।

सवन में परमात्म है तथा ॥



यह कविता तोहर देना न,
 मरि जाय कल संघट है निरंन।
 मरि सुख मरि मरि मरि मरि,
 मरि है मरि है मरि मरि ॥

४—

मरि मरि मरि मरि मरि है मरि,
 विविध मरि विविध है मरि।
 मरि ! मरि मरि मरि मरि मरि,
 मरि मरि मरि मरि मरि है ।

५—

मरि का मरि परिणाम है,
 मरि का न मरि मरि मरि मरि।
 मरि ! मरि मरि मरि मरि मरि,
 मरि का मरि का मरि मरि है ॥

६—

मरि ' मरि मरि मरि मरि मरि,
 मरि मरि यदि ये विधि योग से।
 मरि जिसे न मरि मरि मरि मरि,
 मरि मरि मरि मरि मरि है मरि ॥

(समीर जलो)

अन्योक्ति सुमन

१
मैं नू बन बनितो परो पेटोरे जल ।
यह बैलनहि लहि मे ररे रान्त सुन मन ।
मे रान्त सुन मन रान्त होमल ते कदमी ।
मह रान्त सरान तेहि बधि बोरिह दानो ।
मे मीर बधि निर रान्तो मीर रान्त ।
मे मीर बधि निर रान्तो मीर रान्त ॥

होम नू पदम रान्त जल रान्त निर रान्त ।
यह रान्त सुन रान्त निर रान्त मे मीर रान्त ।
मे मीर रान्त रान्त रान्त रान्त रान्त रान्त ।

2025

(The page contains musical notation, which is mostly illegible due to extreme blurring.)

44

(The following musical notation consists of six staves of handwritten notes.)

41

21

(रामचन्द्र शुक्ल)

अलृत की आह

(—

एक दिन हम भी किसी के लाल थे,
जिस के लाल किसी के थे पत्नी ।
हूँ भर मित्रता पसीना देस घर,
या दहा देता घरों की ओर ।

२ -

देखा तेरी जलेशों पूर घर,
दिखा दह दह दह पहाड़ों ।
देखा मेरा दिना दह पहाड़
दह मे पहाड़ों के आगे दह ।

३—

जन्म के दिन कूल की थाञ्जी बत्ती,
 दुःख की रातें कटो मुख दिन दुआ ।
 प्यार से मुखड़ा हमारा चूम कर,
 स्वर्गगुप्त पाने सगे माना मिता ।

४—

हाय ! हमारे भी कुत्तों की तरह,
 जन्म पाया प्यार से पात्रे गये ।
 जो पचे कून कने खय बया हुआ,
 कीट से भी नाश्वर माने गये ॥

५—

जन्म पाया पून हिन्दुमान में,
 अन्न खाया और यही का जन पिया ।
 धर्म हिन्दू का हमें अभिमान है,
 निज लेने नाम है भगवान का ॥

६—

पर अज्ञान हम साहू का व्यवहार दे,
 श्राव दे गलत में जाता रहा ।
 खान पूना सा हिन्दू भाका है,
 दे अन्न वा हम अन्धकार में पड़ा है ॥

७—

मिठ गली से वह कुल वाले बल्ले,
 उन वरुण बल्ले हमारा दुन्दुभ है।
 उन अन्धों को उद्वेग है यही,
 य. किलो कुलवान का पादपड है ॥

८—

हम अन्धों ने पतने दूव हैं,
 कर्न कोई रुढ़ करे पर दूव हैं।
 हैं ननों को वे पराया मानते,
 क्या दरी खानी तुम्हारे दूव हैं ॥

९—

रामकों ने मांगते खपिहार हैं,
 पर नही अन्धप अन्ध होड़ने।
 पर का नवा पुराना लोड़ पर,
 हैं नवा नवा निरता लोड़ने ॥

१०—

नय तुम्हारे ही हमें देस दिया,
 एक नया मान भी तुम्हारे दिया।
 हम हैं नन्द पतन सिर मन्त्र,
 क्यों हमें देस परावन कर दिया ॥

उपदेश

अप्रमेय को शब्द बांधि कै बताइये,
 जो अथाह ताहि को न बुद्धि सो बताइये ।
 ताहि पृथि औ बताय लोग भूल ही परै,
 सो प्रसंग लाय व्यर्थ पाद माहि ते परै ॥ १ ॥
 अन्धकार आदि ने रात पुराण को कहै,
 वा महा निशा अखण्ड दीन ब्रह्म ही रहै ।
 फेर में न ब्रह्म के, न आदि के रहौ, अरे,
 चर्मचल को अगम्य और बुद्धि के परै ॥ २ ॥
 चलत तारे रहत पृथ्वी जान यह सब नाहि,
 लेहु एतौ जानि घस है चलत या जग माहि ।



१५

वह भीष्म का इन्द्रिय दमन उनही घरों में धीरता,
 वह शीतल उनका और उनकी धीरता मभीरता ।
 उनकी मंगलता और उनकी वह विशाल विवेकता,
 हे एक जन के अनुकरण में सब गुणों की पद्धता ।



पञ्चवटी

१

रेखन की चंचल किरणें खेल रही हैं जल धल में,
 लज्ज पादनी बिछो हुई है अचनी और अमर तल में ।
 न द्रष्ट करती है धरती हरित तलों की नोकों से,
 मानो भूम रहे हैं वह भी मन्द पवन के भोंकों से ॥

२

पर्वतों की छाया में है सुन्दर पर्वतुटीर बना, ^१
 उनके सम्मुख स्वच्छ शिला पर धीरे धीरे निर्भीकता ।
 ग रहा यह शीन धनुर्धर जब कि भुवन भर सोता है,
 भोगी कुसुमायुध जागी सा पना दृष्टिगत होता है ।

मैथिलीशरण गुप्त

गलिवांगों का गन्ध लगाये ।

आया फिर तू अलख जगाये ॥

हट कर मैंने तुझे हटाया ।

बार बार तू आया ॥

आर्त गिरा कानों में आई,

बह थी तेरी आहट लाई,

पर मैं उस पर ध्यान न लाया,

बार बार तू आया ॥

पीड़ित के निःश्वास अरे रे !

मैं क्या जानूँ कर धे तेरे !

सुन पर नाया नद था छाया,

बार बार तू आया ॥

अब जो मैं पटचानूँ तुझको,

तो तू भूल गया है सुन का,

मैं हूँ जितने तुझे बुझाया ।

बार बार तू आया,

पर मैंने पटचान न पाया ॥

नर नरु है धारण किया करने को तिलवाड़ ।
 कोई देत सका नही विल की ओट पड़ाइ ॥
 अहङ्कार का हार हाल कल्पना के गते ।
 गणनाय संतार मन बैठा नै आपहो ॥

ॐ ॐ ॐ

तुलसीदास और रामायण

एक बार गये मूल का मूल ।

लगे की नवतिनह्र बनाया राम नाम वह बात ॥

एक बार वह अद्वैतिक तैलिक मिले एक ही तब ॥

मिले राम बैराग्य कालि का पते एक ही तब ।

मार्ग और परमार्थ मिले एक ही तब निम्न ।

कहुनव की कहुनव से खोलें परम नृप का दर ॥

मैंने सिद्ध हो सते लगे का मीठ है तब

मिले का है दर न लगे का राम नाम काल

मिले मिले मैं राम तुम्हारे राम राम काल

मिले मिले काल राम है तुम का दर

... ॥ १ ॥
... ॥ २ ॥
... ॥ ३ ॥
... ॥ ४ ॥
... ॥ ५ ॥
... ॥ ६ ॥
... ॥ ७ ॥
... ॥ ८ ॥
... ॥ ९ ॥
... ॥ १० ॥
... ॥ ११ ॥
... ॥ १२ ॥
... ॥ १३ ॥
... ॥ १४ ॥
... ॥ १५ ॥
... ॥ १६ ॥
... ॥ १७ ॥
... ॥ १८ ॥
... ॥ १९ ॥
... ॥ २० ॥
... ॥ २१ ॥
... ॥ २२ ॥
... ॥ २३ ॥
... ॥ २४ ॥
... ॥ २५ ॥
... ॥ २६ ॥
... ॥ २७ ॥
... ॥ २८ ॥
... ॥ २९ ॥
... ॥ ३० ॥
... ॥ ३१ ॥
... ॥ ३२ ॥
... ॥ ३३ ॥
... ॥ ३४ ॥
... ॥ ३५ ॥
... ॥ ३६ ॥
... ॥ ३७ ॥
... ॥ ३८ ॥
... ॥ ३९ ॥
... ॥ ४० ॥
... ॥ ४१ ॥
... ॥ ४२ ॥
... ॥ ४३ ॥
... ॥ ४४ ॥
... ॥ ४५ ॥
... ॥ ४६ ॥
... ॥ ४७ ॥
... ॥ ४८ ॥
... ॥ ४९ ॥
... ॥ ५० ॥
... ॥ ५१ ॥
... ॥ ५२ ॥
... ॥ ५३ ॥
... ॥ ५४ ॥
... ॥ ५५ ॥
... ॥ ५६ ॥
... ॥ ५७ ॥
... ॥ ५८ ॥
... ॥ ५९ ॥
... ॥ ६० ॥
... ॥ ६१ ॥
... ॥ ६२ ॥
... ॥ ६३ ॥
... ॥ ६४ ॥
... ॥ ६५ ॥
... ॥ ६६ ॥
... ॥ ६७ ॥
... ॥ ६८ ॥
... ॥ ६९ ॥
... ॥ ७० ॥
... ॥ ७१ ॥
... ॥ ७२ ॥
... ॥ ७३ ॥
... ॥ ७४ ॥
... ॥ ७५ ॥
... ॥ ७६ ॥
... ॥ ७७ ॥
... ॥ ७८ ॥
... ॥ ७९ ॥
... ॥ ८० ॥
... ॥ ८१ ॥
... ॥ ८२ ॥
... ॥ ८३ ॥
... ॥ ८४ ॥
... ॥ ८५ ॥
... ॥ ८६ ॥
... ॥ ८७ ॥
... ॥ ८८ ॥
... ॥ ८९ ॥
... ॥ ९० ॥
... ॥ ९१ ॥
... ॥ ९२ ॥
... ॥ ९३ ॥
... ॥ ९४ ॥
... ॥ ९५ ॥
... ॥ ९६ ॥
... ॥ ९७ ॥
... ॥ ९८ ॥
... ॥ ९९ ॥
... ॥ १०० ॥

खद्वय दन को क्षयिष पंचाननहीं एक ।
 गज शेरिव सों आपहीं कियौ राज अभिषेक ॥ ४५ ॥
 बानु कोपित बेहरी लहुँ धाये दिफराल ।
 रै धंधकि अंगार कै प्रलयकाल के ताल ॥ ४६ ॥
 दिग्न निग्न हवै उड़ति बयो नद भौरु को भीर ।
 दार्यो बुद्ध करीन्द्र को वहुँ बेहरी घोर ॥ ४७ ॥
 पापोन सनु देखियनु बल धीरज तें हीन ।
 या कालन में केहरी ! एक तू ही स्वाधीन ॥ ४८ ॥
 जा तनु दारिधि में सदा खेलति अवनु बरंग ।
 तनगैगो क्योंकरि कहौ ता नधि दुख उमंग ॥ ४९ ॥
 होति लाख में एक कहूँ, जनल दन वह आंस ।
 देखत ही दहि बरति जो दुषनदीह दलु राख ॥ ५० ॥
 मुमट नदन अंगार पै अबरनु एकु लखातु ।
 ज्यौं ज्यौं परतु वनाह बनु त्यों त्यों धंधकत जातु ॥ ५१ ॥
 जाव फूटि रवि रंगरती जलसौरी वह आंस ।
 सहज जोड़ ज्वाला ज्वलित फिर जीवी जुग लख ॥ ५२ ॥
 मुख रंग कहें दगनि में वहुँ रण जोड़ जोड़ ।
 योतें लज्जित होतु लुप्त बाने दखत होतु ॥ ५३ ॥
 बलवि जायु लघु न्यानि में वह कपल लनुगाव ।
 विनुवन में न समनु पै मुकुनु तानु अवदाव ॥ ५४ ॥

पल्लो माय गुन नृमिकें पर गदाय करदाल ।
 जनि लजाइयो दूध गो पयोधेरनु की लाल ॥ ६२ ॥
 चूर चूर दूध अन्त लों रसिदो गुल की लाज ।
 जननि दूध पितु रस की अहै परिन्दा आज ॥ ६६ ॥
 लोटि लोटि जायँ भये धरि धूसरित आज ।
 दस्त तुम्हारे दाध है ता धरनी की लाज ॥ ६७ ॥
 मिलतु न पना में सुदिनु भिरत न कादर मन्द ।
 नहि सोधत रणधांकुरे नखत चार तिथि चन्द ॥ ६८ ॥
 रहिओं अमर गदाय एरि रति निज प्रण की लाज ।
 कै अब भीषम ही यहां कै तुम्हीं चदुराज ॥ ६९ ॥
 इत पारथ रथ सारथी उत भीषम रण धीर ।
 दिलहू नहि टारे टरै दुहैं वय प्रण धीर ॥ ७० ॥
 मनु अस्त लों आजु जौ वन्यौ जयद्रथ जीव ।
 जिता लाय तनु जारि हों तोर तोर गाण्ढीव ॥ ७१ ॥
 लैन सक्यौ हरि ! आजु जौ अधम जयद्रथ जीव ।
 बौ पारथ हों क्लीव अब नहि लैहों गाण्ढीव ॥ ७२ ॥
 मृद न तौ लौ ऐठिहों ही प्रताप पुन हीन ।
 धरि पायो जौ लों न मैं गढ़ चितौर स्वाधीन ॥ ७३ ॥
 महल नाहि पगु धारिहौ रहिहौ कुटी दयाय ।
 हौ प्रताप जौ लों न ध्वज दई फेरि फहराय ॥ ७४ ॥

क्षुप राधि आतप तपि क्षुपक, भरत फलपि विनु नीर ।
 इत लेपत तुम अरगज, विराम उसीर कुटीर ॥ १०५ ॥
 उत हाकिम रैयत रक्त, फरत पान उर चीर ।
 इत पीवत तैं मद् अरे ! नृपति मनोज अधीर ॥ १०६ ॥
 लखि जिनके गजघृत भुज, फांपत हैं चमदूत ।
 भारत भू पै अब फां हैं घांके रजपूत ॥ १०७ ॥
 रे निलज्ज ! जिनके अछत, अरिहि मुकायौ माथ ।
 अब तिन मूँछन पै कहा पुनि पुनि फेरत हाथ ॥ १०८ ॥
 कहं प्रताप कहं दाप यह, कहाँ आन कहं वान ।
 कहाँ गेड़ यह मेंड अब, हैं सब सूखी शान ॥ १०९ ॥
 अब फोयल ! यह शत्रु कहाँ, कहें कृजन तरु डार ।
 यह रसाल रस घोर कहें, यह वन विहङ्ग विहार ॥ ११० ॥
 हूँ हैं पुनि स्वाधीन तुम सदा न रहिहौ दास ।
 या युग के बलिदान कौ लिखियौ तब इतिहास ॥ १११ ॥
 आजु कालि कयतें करत, भये न कबहुँ तयार ।
 घलघली सत हूँ रही, इत मांजत हथियार ॥ ११२ ॥
 भूलेहुँ कबहुँ न जाइये, देस विमुख जन पास ।
 देस धिरोधी संगतें, भली नरक की वास ॥ ११३ ॥
 तन कारो कारो कुदिन, कारो कुल गृह गोत ।
 पै कुरूप धारेनु कौ, दियौ न कारा होत ॥ ११४ ॥

मैं था विरक्त मुक्त में जग की अनिर्व्यता पर ।
 कबान भर गढ़ा था तब तू हिमी पवन में ॥
 बेबस गिरे हुआ के तू बीच में लड़ा था ।
 मैं स्वर्ग देखना था भूकृता बड़ा धन में ॥
 तू ने दिये अनेको अवसर न मिल सदा मैं ।
 बूझ में मगन था मैं मस्त था कथन में ॥
 दरिचंद और धुब ने कुछ और ही बनाया ।
 मैं तो समझ रहा था तेरा दत्ताप धन में ॥
 मैं सोचता तुझे था रावण की लासला में ।
 पर था दधीचि के तू परमार्थ रूप तन में ॥
 ! तेरा पता सिवन्दर का मैं समझ रहा था ।
 पर तू बसा हुआ था परहाद फाँदकन में ॥
 कीसस की हाथ में था करता विनोद तू ही ।
 तू अश्व में हँसा था महमूद के रुदन में ॥
 प्रह्लाद जानता था तेरा सही ठिछाना ।
 तू हो मचल रहा था मसूर की रटन में ॥
 आखिर चमक पड़ा तू गांधी की दृष्टियों में
 मैं था तुझे समझता सुहराव पील तन में ॥
 कैसे तुझे मिलूंगा जब भेद इस कदर है ।
 दौरान हो के भगवन् ! आया हूँ मैं सरन में ॥

तू रूप है किरन में सींदर्य सुमन में ।
 तू प्राण है पवन में विस्तार है गगन में ॥
 तू ज्ञान हिन्दुओं में ईमान मुस्लिमों में ।
 तू प्रेम किश्मियन में है सत्य तू सुजन में ॥
 हे दीनबन्धु ! ऐसी प्रतिभा प्रदान कर तू ।
 देखूँ तुझे दगों में मन में तथा घचन में ॥
 पटिनाइयों दुखों का इतिहास ही सुवश है ।
 मुझ को स्मर्य कर तू घस कष्ट के सहन में ॥
 दुख में न हार मानूँ सुख में तुझे न भूलूँ ।
 ऐसा प्रभाव भर दे मेरे अधीर मन में ॥



मूर्खकान्त त्रिपाठी निराशा

२२७

हैं दिया वो नर्म रत्नका, समझते,
 किन्तु वो भी हैं स्त्री के ध्यान में ॥
 अह ! कितने दिवस उन मननित्त बुके,
 सित्त बुके कितने हृदय हैं हित्त बुके,
 तब बुके वे प्रिय वरदा की छांव में,
 दुःख उन कलुषागिणियों के नित्त बुके ॥
 क्यों हनते हो लिये वे मौन हैं ?
 पश्चि ! वे कोनल सुनन हैं मौन हैं ?

५

५

५

दुष्ट दृश्य के सिंहासन पर
 जिस जलौ के वे सत्राट
 दीप रहे जिन के मखक पर
 रवि शशि दारे विख विराट ?

[illegible]

1 2 3

[illegible]

(5)

काली मे बंजल नर-नर
मन्त्र निम्न जल का मे मन्त्र
निम्न सर सर, कन्धर भर भर
निम्न मे मे लोभन वल

बने दुग्धन को ध्यान शिमेर
सद सति, सु करे, करो !

मान देना है और मान

मान देना है और मान

मान देना है और मान

मान देना है और मान

(२)

मान देना है और मान

मान देना है और मान

मान देना है और मान

मान देना है और मान

मान देना है और मान

मान देना है और मान

(४)

मान देना है और मान

मान देना है और मान

मान देना है और मान

मान देना है और मान

मान देना है और मान

मान देना है और मान

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥
 श्रीकृष्णाय नमः ॥
 श्रीगुरुभ्यो नमः ॥
 श्रीगणेशाय नमः ॥

33

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥
 श्री कृष्णाय नमः ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥
 श्री कृष्णाय नमः ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥
 श्री कृष्णाय नमः ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥
 श्री कृष्णाय नमः ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥
 श्री कृष्णाय नमः ॥

1 2 3

[illegible]

(९)

कृति धद पृष्ठा की अविद्वत—

स्वर्ग आशाओं की अभिराम—

कान्ति की सरल मूर्ति निद्रित—गरल की अमृत अमृत की प्रण—

रेणु सी किस दिगन्त में लोनी

वेणु ध्वनि सी न शरीरधीन ।



ॐ नमो भगवते

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥

तुम योग और मैं सिद्धि ।
 तुम हो रागानुग निरञ्जल रूप,
 मैं शुचिता सरल मर्मद्वि ॥

(२)

तुम मृदुमानस के भाव और मैं मनोरञ्जिनी भाषा ।
 तुम नन्दन वन घन विटप और मैं सुख शोवज तल राग्या ॥
 तुम प्राण और मैं काया ।
 तुम शुद्ध सन्निधानन्द प्रसन्न,
 मैं मनोमोहनी माया ।
 तुम प्रेममयी के कंठहार मैं बेणी काल नागिनी ।
 तुम कर पल्लव मरुत सिंघार मैं व्याकुल विरह रागिनी ॥
 तुम पथ हो मैं हूँ रेणु ।
 तुम हो राधा के मनमोहन,
 मैं बन अधरों की वेणु ॥

(३)

तुम पथिक दूर के शान्त और मैं घाट जोड़ती आशा ।
 तुम भव सागर दुस्वार पार जाने की मैं अभिलाषा ॥
 तुम नभ हो मैं नोलिमा ।
 तुम शरद मुधाकर कला हास,
 मैं हूँ निशीथ मधुरिमा ॥

यह सब कुछ हीनता है। यह सब हीनता है।
 यह सब हीनता है। यह सब हीनता है।
 यह सब हीनता है। यह सब हीनता है।
 यह सब हीनता है। यह सब हीनता है।
 यह सब हीनता है। यह सब हीनता है।

। १ ।

यह सब हीनता है। यह सब हीनता है।
 यह सब हीनता है। यह सब हीनता है।
 यह सब हीनता है। यह सब हीनता है।
 यह सब हीनता है। यह सब हीनता है।
 यह सब हीनता है। यह सब हीनता है।

यह सब हीनता है। यह सब हीनता है।
 यह सब हीनता है। यह सब हीनता है।
 यह सब हीनता है। यह सब हीनता है।
 यह सब हीनता है। यह सब हीनता है।
 यह सब हीनता है। यह सब हीनता है।

तुम योग और मैं सिद्धि ।
 तुम हो रामानुग निरङ्गल बप,
 मैं शुचिता सरल ममृद्धि ॥

(२)

तुम मृदुमानस के भाव और मैं मनोरंजिनी भाषा ।
 तुम नन्दन वन घन विटप और मैं मुख्य शीतल छल शाम्बा ॥
 तुम प्राण और मैं काया ।
 तुम शुद्ध सन्निधानन्द ब्रह्म,
 मैं मनोमोहनी माया ।
 तुम प्रेममयी के कटहार मैं बेणी फाल नागिनी ।
 तुम कर पल्लव भङ्गुत सितार मैं व्याकुल विरह रागिनी ॥
 तुम पथ हो मैं हूँ रेणु ।
 तुम हो राधा के मनमोहन,
 मैं धन अधरों की बेणु ॥

(३)

तुम अधिक दूर के शान्त और मैं बाट जोड़ती आशा ।
 तुम भव सागर दुस्वार पार जाने की मैं अभिलाषा ॥
 तुम नम हो मैं नोलिमा ।
 तुम शरद सुधाकर कला हास,
 मैं हूँ निरीध मधुरिमा ॥

तुम नन्द तुम नन्द होकर परान हैं गुरु की मन्त्र मन्त्र ।
तुम गुरुदेवकी तुम नन्द हैं गुरु की मन्त्र मन्त्र ॥

तुम गुरु हो हैं गुरु मन्त्र ।

तुम गुरुदेवकी मन्त्र मन्त्र,

हैं मन्त्र मन्त्र मन्त्र ॥

(४)

तुम गुरुदेवकी मन्त्र मन्त्र हैं गुरु मन्त्र मन्त्र ।
तुम गुरु मन्त्र मन्त्र मन्त्र हैं गुरु मन्त्र मन्त्र ॥

तुम गुरुदेव हैं गुरुदेव ।

तुम गुरुदेव मन्त्र मन्त्र मन्त्र,

हैं गुरुदेव मन्त्र मन्त्र ॥

तुम गुरु मन्त्र मन्त्र मन्त्र हैं गुरु मन्त्र मन्त्र मन्त्र,
तुम गुरु मन्त्र मन्त्र मन्त्र हैं गुरु मन्त्र मन्त्र मन्त्र ॥

तुम गुरु हो हैं गुरु मन्त्र ।

तुम गुरु मन्त्र मन्त्र मन्त्र मन्त्र,

हैं गुरु मन्त्र मन्त्र मन्त्र ॥

(सुमित्रानन्दन पन्त)

छाया

(१)

कहो कौन दमयन्ती सी

तुम बरु के नीचे सोई ?

हाय ! तुम्हें भी त्याग गया क्या

अलि ! नल सा निष्ठुर कोई ?

नीले पत्ते की शय्या प

तुम विरक्ति सी मूर्छा सी

विजन विपिन में कैत बड़ी हो

विरहमलिन दुःख विधुग सी ?

(२)

जाने हो जाना ही
 तुम पर नही हो हीन ?
 दुनिया में नौकरों में,
 खराबी में, सब से हीन ?

निर्गन्ध के अन्तर पर
 बार बार भर लड़ी सने—
 क्या तुम फिर बार बार पल्लव का
 फिल्लो हो कसकत इतिहास ?

(३)

मेरे जीवन के जीवन हुए पर
 मेरे सपनों ने निर्भर
 किन कलहों का करम फिर तुम
 गीत रहे हो कोनकर ?

दिहकर तुम ने दिग्ध जन्म पा,
 बढ़ कर निरुत्तर तटवर के मग,
 तुम्हारे सपनों की सखी से
 उठ कर खाने कोनकर जग

(सुमित्रानन्दन पन्त)

छाया

(१)

कहो कौन दमयन्ती सी

तुम बरु के नीचे सोई ?

हाय ! तुम्हें भी त्याग गया क्या

अलि ! नल सा निष्ठुर कोई ?

नीले पत्तों की शय्या पर

तुम विरक्ति सी मूर्छा सी

विजन विपिन में कौन बड़ी हो

विरहमलिन दुख विधुरा सी ?

मुसकान

कहेंगे क्या मुझ से सब लोग
कभी आता है इसका ध्यान'
रोस्ने पर भी वो सखि हाथ'
नही रुकती है यह मुसकान

विपिन में पावस के से दीप
सुखानल नहसा सौ सौ भाव
सज्जन हो लटने नित उर धाँच
नहीं रख सकती उनिक दुराव'
बन्धन के ये शिगु नादान
हंसा देते हैं मुझे निदान'

ब्रह्मरि—ब्रह्मरि

समसीत—सम समवाय

हमने—हमने हुए ।

हमने—हमने हुए गुण नहीं

हमने मुँह में काल कट विष है ।

देव-विराजने—सब देव देव पाँव

दुखने लगे होंगे ।

नष्टकरहु—नष्ट हुए करो

नष्टन तारे—नष्टनों से छाटा

धनने—देख

पृष्ठ ९

ब्रह्म न दायू—दाय नहीं चलता

गर्भ-धोर—इस सुठार की भवभर

गति को मुनते ही राजाओं की

त्रियों के गर्भ में गिर जाते हैं ।

बड-कृपा = बाहरी कृपा । जैसी कृपा

धैसी ही आपकी मूर्ति है ।

करहु दिन—बयो नहीं करसे

पृष्ठ १०

मुनहु-लपन कर = अरसाव मोल जायगा

या और मोध दम पर । क्या

कहीं सोधेपने से भी क्या

कोई दोष है ।

सरवर—सरावरी

देव एक-मुक्तारे = देव ! हमारा ता

धनुष ही एक युद्ध है पर आप

के परम पवित्र की गुण हैं ।

(नौ गुण राम, दम, तर

रौप्य, सतोष, मनुष्य, शान,

विज्ञान और अस्मिता)

अथवा हमें तो एक पाँव

वाले धनुष माना गया है ।

पर आप की ६ तार वाले

यज्ञोपवीत का यज्ञ है ।

अथवा हमारा धनुष तो एक-

गुण है (शमुषध) आर का

यज्ञ पर्वत की गुणवाला है ।

नौ या गुण गया है कि १ से

गुणों का २, २ से गुण का

३५ । ३ के गुण में ६ ही

धने रहता है । सारांश यह

कि आप वृद्ध भी कृपा दी

करें, मता मता के साथ साथ

उपों का लो है ।

पृष्ठ ११

आनन्द—आनन्दमयी, आनन्द, आनन्द

विगुह्य ब्रह्म से किसी प्रकार की सहायता न पाकर ब्रह्म हुआ समाज
 अनाश्रवाद के गर्त में गिरा ही चाहता था कि बनारस के स्वामी
 रामानन्द ने (रामानुज के सगुणोपासनात्मक भक्तिसम्प्रदाय का
 आश्रय लेते हुए) सगुण भक्ति का उपदेश दे उसे पतन से बचाया।
 रामानन्द की शिष्य परम्परा में एक और कबीर हुए, जिन्होंने
 नैष्ठिक भक्ति शाखा का उपदेश देकर नवीन सम्प्रदाय खड़ा
 किया और दूसरी ओर तुलसीदास हुए जिन्होंने रामभक्ति का
 उपदेश दे जनता को संग्रहविग्रह-आत्मक उपदेश की ओर चलाया।
 कबीर ने क्या किया ?

(१) हिन्दू जाति धर्मप्राण है। इस्लाम धर्मप्रेमी है। दोनों जाति
 धर्म के नाम पर एक दूसरे का सहार कर रही थीं। हिन्दुओं
 के धर्म का आधार परमात्मा है और मुसलमानों के धर्म का
 आधार खुदा। कबीर ने परमात्मा और खुदा की सत्ता का
 एक पता हिन्दू और मुसलमानों को एक करने का सुव्य
 प्रयत्न किया।

(२) विभजनीय ऐक्य के माग में प्रबलतम विग्रह हिन्दुओं की
 वर्णव्यवस्था थी। हिन्दू समाज में वैदिक काल से दो शक्तियाँ
 काम करती आ रही थीं। पहली सत्ता-आत्मिक अर्थान् ब्राह्मण, जो
 लोक समूह की ओर अधिक ध्यान देने का वैदिक मन्त्रव्य
 को परिमित केन्द्र तक सीमित रखना चाहता था और दूसरी
 विकासात्मक अर्थान् क्षत्रिय जो विभजनीय ऐक्य की ओर
 अधिक ध्यान देने हुए वैदिक मन्त्रव्य को मर्यादा पार करना
 चाहते थे, और इस प्रकार वर्णव्यवस्था की रचना की प्रेरणा

